हरिपदपाद्यतरङ्गिणि गङ्गे हिमविधुमुक्ताधवलतरङ्गे।
दूरीकुरु मम दुष्कृतिभारं कुरु कृपया भवसागरपारम्॥ ३॥
तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलु तेन गृहीतम्।
मातर्गङ्गे त्वयि यो भक्तः किल तं द्रष्टुं न यमः शक्तः॥ ४॥
पतितोद्धारिणि जाह्नवि गङ्गे खण्डितगिरिवरमण्डितभङ्गे।
भीष्मजननि हे मुनिवरकन्ये पतितनिवारिणि त्रिभुवनधन्ये॥ ५॥
कल्पलतामिव फलदां लोके प्रणमति यस्त्वां न पतति शोके।
पारावारविहारिणि गङ्गे विमुखयुवतिकृततरलापाङ्गे॥ ६॥

हे गंगे! तुम श्रीहरिके चरणोंकी चरणोदकमयी नदी हो, हे देवि! तुम्हारी तरंगें हिम, चन्द्रमा और मोतीकी भाँति श्वेत हैं, तुम मेरे पापोंका भार दूर कर दो और कृपा करके मुझे भवसागरके पार उतारो॥ ३॥

हे देवि! जिसने तुम्हारा जल पी लिया, अवश्य ही उसने परमपद पा लिया, हे मातः गंगे! जो तुम्हारी भक्ति करता है, उसको यमराज नहीं देख सकता (अर्थात् तुम्हारे भक्तगण यमपुरीमें न जाकर वैकुण्ठमें जाते हैं)॥ ४॥

हे पतितजनोंका उद्धार करनेवाली जह्नुकुमारी गंगे! तुम्हारी तरंगें गिरिराज हिमालयको खण्डित करके बहती हुई सुशोभित होती हैं, तुम भीष्मकी जननी और जह्नुमुनिकी कन्या हो, पतितपावनी होनेके कारण तुम त्रिभुवनमें धन्य हो॥ ५॥

हे मातः! तुम इस लोकमें कल्पलताकी भाँति फल प्रदान करनेवाली हो, तुम्हें जो प्रणाम करता है, वह कभी शोकमें नहीं पड़ता, हे गंगे! मानिनि वनिताके समान चंचल कटाक्षवाली तुम समुद्रके साथ विहार करती हो॥ ६॥

तव चेन्मातः स्रोतःस्नातः पुनरपि जठरे सोऽपि न जातः।
नरकनिवारिणि जाह्नवि गङ्गे कलुषविनाशिनि महिमोत्तुङ्गे॥ ७ ॥
पुनरसदङ्गे पुण्यतरङ्गे जय जय जाह्नवि करुणापाङ्गे।
इन्द्रमुकुटमणिराजितचरणे सुखदे शुभदे भृत्यशरण्ये॥ ८ ॥
रोगं शोकं तापं पापं हर मे भगवति कुमतिकलापम्।
त्रिभुवनसारे वसुधाहारे त्वमसि गतिर्मम खलु संसारे॥ ९ ॥
अलकानन्दे परमानन्दे कुरु करुणामयि कातरवन्द्ये।
तव तटनिकटे यस्य निवासः खलु वैकुण्ठे तस्य निवासः॥ १० ॥

हे गंगे! जिसने तुम्हारे प्रवाहमें स्नान कर लिया, वह फिर मातृगर्भमें प्रवेश नहीं करता, हे जाह्नवि! तुम भक्तोंको नरकसे बचाती हो और उनके पापोंका नाश करती हो, तुम्हारा माहात्म्य अतीव उच्च है॥ ७॥

हे करुणाकटाक्षवाली जह्नुसुते गंगे! मेरे अपावन अंगोंपर अपनी पावन तरंगोंसे युक्त हो उल्लसित होनेवाली, तुम्हारी जय हो! जय हो!! तुम्हारे चरण इन्द्रके मुकुटमणिसे प्रदीप्त हैं, तुम सबको सुख और शुभ देनेवाली हो और अपने सेवकको आश्रय प्रदान करती हो॥ ८॥

हे भगवति! तुम मेरे रोग, शोक, ताप, पाप और कुमति-कलापको हर लो, तुम त्रिभुवनकी सार और वसुधाका हार हो, हे देवि! इस संसारमें एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो॥ ९॥

हे दुःखियोंकी वन्दनीया देवि गंगे! तुम अलकापुरीको आनन्द देनेवाली और परमानन्दमयी हो, तुम मुझपर कृपा करो, हे मातः! जो तुम्हारे तटके निकट वास करता है, वह मानो वैकुण्ठमें ही वास करता है॥ १०॥

वरमिह नीरे कमठो मीनः किं वा तीरे शरटः क्षीणः।
अथवा श्वपचो मलिनो दीनस्तव न हि दूरे नृपतिकुलीनः॥ ११॥
भो भुवनेश्वरि पुण्ये धन्ये देवि द्रवमयि मुनिवरकन्ये।
गङ्गास्तवमिममलं नित्यं पठति नरो यः स जयति सत्यम्॥ १२॥
येषां हृदये गङ्गाभक्तिस्तेषां भवति सदा सुखमुक्तिः।
मधुराकान्तापज्झटिकाभिः परमानन्दकलितललिताभिः॥ १३॥
गङ्गास्तोत्रमिदं भवसारं वाञ्छितफलदं विमलं सारम्।
शङ्करसेवकशङ्कररचितं पठति सुखी स्तव इति च समाप्तः॥ १४॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीगङ्गास्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

हे देवि! तुम्हारे जलमें कच्छप या मीन बनकर रहना अच्छा है, तुम्हारे तीरपर दुबला-पतला गिरगिट (कृकलास) बनकर रहना अच्छा है या अति मलिन दीन चाण्डालकुलमें जन्म ग्रहण कर रहना अच्छा है, परंतु (तुमसे) दूर कुलीन नरपति होकर रहना भी अच्छा नहीं॥ ११॥

हे देवि! तुम त्रिभुवनकी ईश्वरी हो, तुम पावन और धन्य हो, जलमयी तथा मुनिवरकी कन्या हो। जो प्रतिदिन इस गंगास्तोत्रका पाठ करता है, वह निश्चय ही संसारमें जयलाभ कर सकता है॥ १२॥

जिनके हृदयमें गंगाके प्रति अचला भक्ति है, वे सदा ही आनन्द और मुक्तिलाभ करते हैं; यह स्तुति परमानन्दमयी सुललित पदावलीसे युक्त, मधुर और कमनीय है॥ १३॥

इस असार संसारमें उक्त गंगास्तोत्र ही निर्मल सारवान् पदार्थ है, यह भक्तोंको अभिलषित फल प्रदान करता है, शंकरके सेवक शंकराचार्यकृत इस स्तोत्रको जो पढ़ता है, वह सुखी होता है—इस प्रकार यह स्तोत्र समाप्त हुआ॥ १४॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यविरचित श्रीगंगास्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

५१—गङ्गादशहरास्तोत्रम्

ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः।
नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमोऽस्तु ते॥ १॥
नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्यै ते नमो नमः।
सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये॥ २॥
सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्छ्रेष्ठ्यै नमोऽस्तु ते।
स्थास्नुजङ्गमसम्भूतविषहन्त्र्यै नमोऽस्तु ते॥ ३॥
संसारविषनाशिन्यै जीवनायै नमोऽस्तु ते।
तापत्रितयसंहन्त्र्यै प्राणेश्यै ते नमो नमः॥ ४॥
शान्तिसन्तानकारिण्यै नमस्ते शुद्धमूर्तये।
सर्वसंशुद्धिकारिण्यै नमः पापारिमूर्तये॥ ५॥

ॐ शिवस्वरूपा श्रीगंगाजीको नमस्कार है। कल्याणदायिनी गंगाजीको नमस्कार है। हे देवि गंगे! आप विष्णुरूपिणी हैं, आपको नमस्कार है। ब्रह्मस्वरूपा! आपको नमस्कार है, रुद्ररूपिणी! आपको नमस्कार है। शंकरप्रिया! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। देवस्वरूपिणी! आपको नमस्कार है। ओषधिरूपा! आपको नमस्कार है॥ १-२॥

आप सबके सम्पूर्ण रोगोंकी श्रेष्ठ वैद्या हैं, आपको नमस्कार है। स्थावर और जंगम प्राणियोंसे प्रकट होनेवाले विषका आप नाश करनेवाली हैं, आपको नमस्कार है। संसाररूपी विषका नाश करनेवाली जीवनरूपा आपको नमस्कार है। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक—तीनों प्रकारके क्लेशोंका संहार करनेवाली आपको नमस्कार है। प्राणोंकी स्वामिनी आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ३-४॥

शान्तिका विस्तार करनेवाली शुद्धस्वरूपा आपको नमस्कार है। सबको शुद्ध करनेवाली तथा पापोंकी शत्रुस्वरूपा, आपको नमस्कार है।

भुक्तिमुक्तिप्रदायिन्यै भद्रदायै नमो नमः।
भोगोपभोगदायिन्यै भोगवत्यै नमोऽस्तु ते॥ ६॥
मन्दाकिन्यै नमस्तेऽस्तु स्वर्गदायै नमो नमः।
नमस्त्रैलोक्यभूषायै त्रिपथायै नमो नमः॥ ७॥
नमस्त्रिशुक्लसंस्थायै क्षमावत्यै नमो नमः।
त्रिहुताशनसंस्थायै तेजोवत्यै नमो नमः॥ ८॥
नन्दायै लिङ्गधारिण्यै सुधाधारात्मने नमः।
नमस्ते विश्वमुख्यायै रेवत्यै ते नमो नमः॥ ९॥

भोग, मोक्ष तथा कल्याण प्रदान करनेवाली आपको बार-बार नमस्कार है। भोग और उपभोग देनेवाली भोगवती नामसे प्रसिद्ध आप पातालगंगाको नमस्कार है॥ ५-६॥

मन्दाकिनी नामसे प्रसिद्ध तथा स्वर्ग प्रदान करनेवाली आप आकाशगंगाको बार-बार नमस्कार है। आप भूतल, आकाश और पाताल—तीन मार्गोंसे जानेवाली और तीनों लोकोंकी आभूषणस्वरूपा हैं, आपको बार-बार नमस्कार है। गंगाद्वार, प्रयाग और गंगासागर-संगम—इन तीन विशुद्ध तीर्थस्थानोंमें विराजमान आपको नमस्कार है। क्षमावती आपको नमस्कार है। गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्निरूप त्रिविध अग्नियोंमें स्थित रहनेवाली तेजोमयी आपको बार-बार नमस्कार है॥ ७-८॥

आप ही अलकनन्दा हैं, आपको नमस्कार है। शिवलिंग धारण करनेवाली आपको नमस्कार है। सुधाधारामयी आपको नमस्कार है। जगत्‌में मुख्य सरितारूप आपको नमस्कार है। रेवतीनक्षत्ररूपा आपको

बृहत्यै ते नमस्तेऽस्तु लोकधात्र्यै नमोऽस्तु ते।
नमस्ते विश्वमित्रायै नन्दिन्यै ते नमो नमः॥ १० ॥
पृथ्व्यै शिवामृतायै च सुवृषायै नमो नमः।
परापरशताढ्यायै तारायै ते नमो नमः॥ ११ ॥
पाशजालनिकृन्तिन्यै अभिन्नायै नमोऽस्तु ते।
शान्तायै च वरिष्ठायै वरदायै नमो नमः॥ १२ ॥
उग्रायै सुखजग्ध्यै च सञ्जीवन्यै नमोऽस्तु ते।
ब्रह्मिष्ठायै ब्रह्मदायै दुरितघ्न्यै नमो नमः॥ १३ ॥

नमस्कार है। बृहती नामसे प्रसिद्ध आपको नमस्कार है। लोकोंको धारण करनेवाली आपको नमस्कार है। सम्पूर्ण विश्वके लिये मित्ररूपा आपको नमस्कार है। सबको समृद्धि देकर आनन्दित करनेवाली आपको बारम्बार नमस्कार है॥ ९-१० ॥

आप पृथ्वीरूपा हैं, आपको नमस्कार है। आपका जल कल्याणमय है और आप उत्तम धर्मस्वरूपा हैं, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। बड़े-छोटे सैकड़ों प्राणियोंसे सेवित आपको नमस्कार है। सबको तारनेवाली आपको नमस्कार है, नमस्कार है। संसार-बन्धनका उच्छेद करनेवाली अद्वैतरूपा आपको नमस्कार है। आप परम शान्त, सर्वश्रेष्ठ तथा मनोवांछित वर देनेवाली हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है॥ ११-१२ ॥

आप प्रलयकालमें उग्ररूपा हैं, अन्य समयमें सदा सुखका भोग करानेवाली हैं तथा उत्तम जीवन प्रदान करनेवाली हैं, आपको नमस्कार है। आप ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मज्ञान देनेवाली तथा पापोंका नाश करनेवाली हैं,

प्रणतार्तिप्रभञ्जिन्यै जगन्मात्रे नमोऽस्तु ते।
सर्वापत्प्रतिपक्षायै मङ्गलायै नमो नमः ॥ १४ ॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥
निर्लेपायै दुर्गहन्त्र्यै दक्षायै ते नमो नमः।
परापरपरायै च गङ्गे निर्वाणदायिनि ॥ १६ ॥
गङ्गे ममाग्रतो भूया गङ्गे मे तिष्ठ पृष्ठतः।
गङ्गे मे पार्श्वयोरेधि गङ्गे त्वय्यस्तु मे स्थितिः ॥ १७ ॥
आदौ त्वमन्ते मध्ये च सर्वं त्वं गाङ्गते शिवे।
त्वमेव मूलप्रकृतिस्त्वं पुमान् पर एव हि।
गङ्गे त्वं परमात्मा च शिवस्तुभ्यं नमः शिवे ॥ १८ ॥

आपको बार-बार नमस्कार है। प्रणतजनोंकी पीड़ाका नाश करनेवाली जगन्माता आपको नमस्कार है। आप समस्त विपत्तियोंकी शत्रुभूता तथा सबके लिये मंगलस्वरूपा हैं, आपके लिये बार-बार नमस्कार है ॥ १३-१४ ॥

शरणागतों, दीनों तथा पीड़ितोंकी रक्षामें संलग्न रहनेवाली और सबकी पीड़ा दूर करनेवाली देवि नारायणि! आपको नमस्कार है। आप पाप-ताप अथवा अविद्यारूपी मलसे निर्लिप्त, दुर्गम दुःखका नाश करनेवाली तथा दक्ष हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है। आप पर और अपर सबसे परे हैं। मोक्षदायिनी गंगे! आपको नमस्कार है ॥ १५-१६ ॥

गंगे! आप मेरे आगे हों, गंगे! आप मेरे पीछे रहें, गंगे! आप मेरे उभयपार्श्वमें स्थित हों तथा गंगे! मेरी आपमें ही स्थिति हो। आकाशगामिनी कल्याणमयी गंगे! आदि, मध्य और अन्तमें सर्वत्र आप हैं। गंगे! आप ही मूलप्रकृति हैं, आप ही परम पुरुष हैं तथा आप ही परमात्मा शिव हैं, शिवे! आपको नमस्कार है ॥ १७-१८ ॥

य इदं पठते स्तोत्रं शृणुयाच्छ्रद्धयाऽपि यः।
दशधा मुच्यते पापैः* कायवाक्चित्तसम्भवैः ॥ १९ ॥
रोगस्थो रोगतो मुच्येद्विपद्भ्यश्च विपद्गतः।
मुच्यते बन्धनाद् बद्धो भीतो भीतेः प्रमुच्यते ॥ २० ॥
सर्वान्कामानवाप्नोति प्रेत्य च त्रिदिवं व्रजेत्।
दिव्यं विमानमारुह्य दिव्यस्त्रीपरिवीजितः ॥ २१ ॥
गृहेऽपि लिखितं यस्य सदा तिष्ठति धारितम्।
नाग्निचौरभयं तस्य न सर्पादिभयं क्वचित् ॥ २२ ॥

जो श्रद्धापूर्वक इस स्तोत्रको पढ़ता और सुनता है; वह मन, वाणी और शरीरद्वारा होनेवाले दस प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है। रोगी रोगसे तथा विपत्तिग्रस्त विपत्तियोंसे मुक्त हो जाता है, बन्धनमें पड़ा हुआ बन्धनमुक्त हो जाता है और भयभीत व्यक्ति भयसे विमुक्त हो जाता है। वह इहलोकमें सभी कामनाओंको प्राप्ति कर लेता है और मृत्युके अनन्तर दिव्यांगनाओंसे सेवित होता हुआ दिव्य विमानमें आरूढ़ होकर स्वर्गलोकको जाता है ॥ १९—२१ ॥

यह स्तोत्र जिसके घरमें लिखकर रखा हुआ हो, उसे कभी अग्नि, चोर और सर्प आदिका भय नहीं होता ॥ २२ ॥

* अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः ॥
परदारोपसेवा च कायिकं त्रिविधं स्मृतम्। पारुष्यमनृतं चैव पैशुन्यं चैव सर्वशः ॥
असंबद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्। परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम् ॥
वितथाभिनिवेशश्च मानसं त्रिविधं स्मृतम्।

बिना दी हुई वस्तुको लेना, निषिद्ध हिंसा, परस्त्रीगमन—यह तीन प्रकारका दैहिक पाप माना गया है। कठोर वचन निकालना, झूठ बोलना, पर और चुगली करना और अंट-संट बातें बकना—ये वाणीसे होनेवाले चार प्रकारके पाप हैं। दूसरेके धनको लेनेका विचार करना, मनसे दूसरोंका बुरा सोचना और असत्य वस्तुओंमें आग्रह रखना—ये तीन प्रकारके मानसिक पाप कहे गये हैं।

ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमीहस्तसंयुता।
संहरेत् त्रिविधं पापं बुधवारेण संयुता॥ २३॥
तस्यां दशम्यामेतच्च स्तोत्रं गङ्गाजले स्थितः।
यः पठेद्दशकृत्वस्तु दरिद्रो वापि चाक्षमः॥ २४॥
सोऽपि तत्फलमाप्नोति गङ्गां सम्पूज्य यत्नतः॥ २५॥

॥ इति श्रीस्कन्दमहापुराणे काशीखण्डे ईश्वरकथितं गङ्गादशहरास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

५२—गङ्गास्तुतिः

मुनिरुवाच

मातस्त्वं परमासि शक्तिरतुला सर्वाश्रया पावनी
लोकानां सुखमोक्षदाखिलजगत्संवन्द्यपादाम्बुजा।

ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षमें हस्त नक्षत्रसहित दशमी तिथिका यदि बुधवारसे योग हो, तो उस दिन गंगाजीके जलमें खड़े होकर जो दस बार इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह दरिद्र हो या असमर्थ, वह भी उसी फलको प्राप्त होता है, जो यथोक्त विधिसे यत्नपूर्वक गंगाजीकी पूजा करनेपर उपलब्ध होनेवाला बताया गया है॥ २३—२५॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके अन्तर्गत काशीखण्डमें ईश्वरकथित गंगादशहरास्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

जह्नुमुनि बोले—माता! आप सर्वश्रेष्ठ, अतुलनीया पराशक्ति, सर्वाश्रयदात्री, लोगोंको पवित्र करनेवाली, आनन्द और मोक्षको प्रदान करनेवाली तथा सम्पूर्ण जगत्‌द्वारा वन्दित चरणकमलवाली हैं।

न त्वां वेद विधिर्न वा स्मररिपुर्नो वा हरिर्नापरे
सञ्जानन्ति शिवे महेशशिरसा मान्ये कथं वेद्म्यहम् ॥ १ ॥
किं तेऽहं प्रवदामि रूपचरितं यच्चेतसो दुर्गमं
पारावारविवर्जितं सुरधुनी ब्रह्मादिभिः पूजिता।
स्वेच्छाचारिणि संवितत्य करुणां स्वीयैर्गुणैर्मां शिवे
पुण्यं त्वं तु कृतागसं शरणगं गङ्गे क्षमस्वाम्बिके ॥ २ ॥
धन्यं मे भुवि जन्म कर्म च तथा धन्यं तपो दुष्करं
धन्यं मे नयनं यतस्त्रिनयनाराध्या दृशालोकये।
धन्यं मत्करयुग्मकं तव जलं स्पृष्टं यतस्तेन वै
धन्यं मत्तनुरप्यहो तव जलं तस्मिन्यतः सङ्गतम् ॥ ३ ॥

आपको ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश (तत्त्वतः) नहीं जानते तथा अन्य लोग भी नहीं जानते। भगवान् शिवके मस्तकसे सम्मानित शिवे! फिर मैं आपको कैसे जान सकता हूँ ॥ १ ॥

मैं आपके अचिन्त्य और अपार रूप तथा चरित्रका क्या वर्णन करूँ? ब्रह्मादि देवताओंके द्वारा पूजित आप सुरनदीके रूपमें प्रतिष्ठित हैं। स्वतन्त्ररूपसे विचरण करनेवाली शिवे! मातः! आप अपने शुभ गुणोंसे पुण्य तथा करुणाका विस्तार करके मुझ कृतापराध और शरणागतको क्षमा कीजिये ॥ २ ॥

मेरा इस पृथ्वीपर जन्म और कर्म दोनों धन्य हुए, मेरी कठिन तपस्या धन्य हुई तथा मेरे ये दोनों नेत्र भी धन्य हुए, जो त्रिलोचन भगवान् शंकरकी आराध्या आपका मैं अपने नेत्रोंसे दर्शन कर रहा हूँ। आपके जलके स्पर्शसे ये मेरे दोनों हाथ धन्य हो गये और यह मेरा शरीर भी धन्य हुआ, जिसमें आपका पावन जल गया है ॥ ३ ॥

नमस्ते पापसंहर्त्रि हरमौलिविराजिते।
नमस्ते सर्वलोकानां हिताय धरणीगते॥ ४॥
स्वर्गापवर्गदे देवि गङ्गे पतितपावनि।
त्वामहं शरणं यातः प्रसन्ना मां समुद्धर॥ ५॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे जह्नुमुनिकृता गङ्गास्तुतिः सम्पूर्णा॥

५३—गंगा-स्तुति

जय जय भगीरथनन्दिनि, मुनि-चय चकोर-चन्दिनि,
नर-नाग-बिबुध-बन्दिनि जय जह्नु बालिका।
बिस्नु-पद-सरोजजासि, ईस-सीसपर बिभासि,
त्रिपथगासि, पुन्यरासि, पाप-छालिका॥ १॥

पापोंका संहार करनेवाली, भगवान् शंकरके मस्तकपर विराजमान तथा सभी प्राणियोंके हितके लिये पृथ्वीपर अवतीर्ण आपको नमस्कार है, नमस्कार है। देवी गंगे! आप स्वर्ग और मोक्ष देनेवाली हैं, पतितोंको पवित्र करनेवाली हैं, मैं आपकी शरणमें हूँ, आप मुझपर प्रसन्न होकर मेरा उद्धार कीजिये॥ ४-५॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणके अन्तर्गत जह्नुमुनिद्वारा की गयी गंगा-स्तुति सम्पूर्ण हुई॥

हे भगीरथनन्दिनी! तुम्हारी जय हो, जय हो। तुम मुनियोंके समूहरूपी चकोरोंके लिये चन्द्रिकारूप हो। मनुष्य, नाग और देवता तुम्हारी वन्दना करते हैं। हे जह्नुकी पुत्री! तुम्हारी जय हो। तुम भगवान् विष्णुके चरणकमलसे उत्पन्न हुई हो; शिवजीके मस्तकपर शोभा पाती हो; स्वर्ग, भूमि और पाताल—इन तीन मार्गोंसे तीन धाराओंमें होकर बहती हो। पुण्योंकी राशि और पापोंको धोनेवाली हो॥ १॥

बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रयताप-हारि,
भँवर बर बिभंगतर तरंग-मालिका।
पुरजन पूजोपहार, सोभित ससि धवलधार,
भंजन भव-भार, भक्ति-कल्पथालिका ॥ २ ॥
निज तटबासी बिहंग, जल-थर-चर पसु-पतंग,
कीट, जटिल तापस सब सरिस पालिका।
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस-बीर,
बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका ॥ ३ ॥

(विनय-पत्रिका)

तुम अगाध निर्मल जलको धारण किये हो, वह जल शीतल और तीनों तापोंको हरनेवाला है। तुम सुन्दर भँवर और अति चंचल तरंगोंकी माला धारण किये हो। नगर-निवासियोंने पूजाके समय जो सामग्रियाँ भेंट चढ़ायी हैं, उनसे तुम्हारी चन्द्रमाके समान धवल धारा शोभित हो रही है। वह धारा संसारके जन्म-मरणरूप भारका नाश करनेवाली तथा भक्तिरूपी कल्पवृक्षकी रक्षाके लिये थालारूप है ॥ २ ॥

तुम अपने तीरपर रहनेवाले पक्षी, जलचर, थलचर, पशु, पतंग, कीट और जटाधारी तपस्वी आदि सबका समानभावसे पालन करती हो। हे मोहरूपी महिषासुरको मारनेके लिये कालिकारूप गंगाजी! मुझ तुलसीदासको ऐसी बुद्धि दो कि जिससे वह श्रीरघुनाथजीका स्मरण करता हुआ तुम्हारे तीरपर विचरा करे ॥ ३ ॥

श्रीयमुनास्तोत्राणि

५४—श्रीयमुनाष्टकम्

मुरारिकायकालिमाललामवारिधारिणी
तृणीकृतत्रिविष्टपा त्रिलोकशोकहारिणी।
मनोऽनुकूलकूलकुञ्जपुञ्जधूतदुर्मदा
धुनोतु मे मनोमलं कलिन्दनन्दिनी सदा॥ १॥
मलापहारिवारिपूरभूरिमण्डितामृता
भृशं प्रपातकप्रवञ्चनातिपण्डितानिशम्।
सुनन्दनन्दनाङ्गसङ्गरागरञ्जिता हिता। धुनोतु०॥ २॥
लसत्तरङ्गसङ्गधूतभूतजातपातका
नवीनमाधुरीधुरीणभक्तिजातचातका।

जो भगवान् कृष्णचन्द्रके अंगोंकी नीलिमा लिये हुए मनोहर जलौघ धारण करती है, त्रिभुवनका शोक हरनेवाली होनेके कारण स्वर्गलोकको तृणके समान सारहीन समझती है, जिसके मनोरम तटपर निकुंजोंका पुंज वर्तमान है, जो लोगोंका दुर्मद दूर कर देती है; वह कालिन्दी यमुना सदा हमारे आन्तरिक मलको धोवे॥ १॥

जो मलापहारी सलिलसमूहसे अत्यन्त सुशोभित है, मुक्तिदायक है, सदा ही बड़े-बड़े पातकोंको लूट लेनेमें अत्यन्त प्रवीण है, सुन्दर नन्दनन्दनके अंगस्पर्शजनित रागसे रंजित है, सबकी हितकारिणी है, वह कालिन्दी यमुना सदा हमारे मानसिक मलको धोवे॥ २॥

जो अपनी सुहावनी तरंगोंके सम्पर्कसे समस्त प्राणियोंके पापोंको धो डालती है, जिसके तटपर नूतन मधुरिमासे भरे भक्तिरसके अनेकों चातक रहा करते हैं, तटके समीप वास करनेवाले भक्तरूपी हंसोंसे

तटान्तवासदासहंससंसृता हि कामदा। धुनोतु० ॥ ३ ॥
विहाररासखेदभेदधीरतीरमारुता
गता गिरामगोचरे यदीयनीरचारुता।
प्रवाहसाहचर्यपूतमेदिनीनदीनदा । धुनोतु० ॥ ४ ॥
तरङ्गसङ्गसैकताञ्चितान्तरा सदासिता
शरन्निशाकरांशुमञ्जुमञ्जरीसभाजिता ।
भवार्चनाय चारुणाम्बुनाधुना विशारदा। धुनोतु० ॥ ५ ॥
जलान्तकेलिकारिचारुराधिकाङ्गरागिणी
स्वभर्तुरन्यदुर्लभाङ्गसङ्गतांशभागिनी ।
स्वदत्तसुप्तसप्तसिन्धुभेदनातिकोविदा । धुनोतु० ॥ ६ ॥

जो सेवित रहती है और उनकी कामनाओंको पूर्ण करनेवाली है; वह कलिन्द-कन्या यमुना सदा हमारे मानसिक मलको मिटावे ॥ ३ ॥

जिसके तटपर विहार और रास-विलासमें खेदको मिटा देनेवाली मन्द-मन्द वायु चल रही है, जिसके नीरकी सुन्दरताका वाणीद्वारा वर्णन नहीं हो सकता, जो अपने प्रवाहके सहयोगसे पृथ्वी, नदी और नदोंको पावन बनाती है; वह कलिन्दनन्दिनी यमुना सदा हमारे मानसिक मलको दूर करे ॥ ४ ॥

लहरोंसे सम्पर्कित वालुकामय तटसे जिसका मध्यभाग सुशोभित है, जिसका वर्ण सदा ही श्यामल रहता है, जो शरद् ऋतुके चन्द्रमाकी किरणमयी मनोहर मंजरीसे अलंकृत होती है और सुन्दर सलिलसे संसारको सन्तोष देनेमें जो कुशल है, वह कलिन्द-कन्या यमुना सदा हमारे मानसिक मलको नष्ट करे ॥ ५ ॥

जो जलके भीतर क्रीडा करनेवाली सुन्दरी राधाके अंगरागसे युक्त है, अपने स्वामी श्रीकृष्णके अंगस्पर्शसुखका, जो अन्य किसीके

जलच्युताच्युताङ्गरागलम्पटालिशालिनी
विलोलराधिकाकचान्तचम्पकालिमालिनी।
सदावगाहनावतीर्णभर्तृभृत्यनारदा । धुनोतु० ॥ ७ ॥
सदैव नन्दनन्दकेलिशालिकुञ्जमञ्जुला
तटोत्थफुल्लमल्लिकाकदम्बरेणुसूज्ज्वला।
जलावगाहिनां नृणां भवाब्धिसिन्धुपारदा। धुनोतु० ॥ ८ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीयमुनाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

लिये दुर्लभ है, उपभोग करती है, जो अपने प्रवाहसे प्रशान्त सप्तसमुद्रोंमें हलचल पैदा करनेमें अत्यन्त कुशल है; वह कालिन्दी यमुना सदा हमारे आन्तरिक मलको धोवे ॥ ६ ॥

जलमें धुलकर गिरे हुए श्रीकृष्णके अंगरागसे अपना अंगस्नान करती हुई सखियोंसे जिसकी शोभा बढ़ रही है, जो राधाकी चंचल अलकोंमें गुँथी हुई चम्पक-मालासे मालाधारिणी हो गयी है, स्वामी श्रीकृष्णके भृत्य नारद आदि जिसमें सदा ही स्नान करनेके लिये आया करते हैं; वह कलिन्द-कन्या यमुना सदा हमारे आन्तरिक मलको धो डाले ॥ ७ ॥

जिसके तटवर्ती मंजुल निकुंज सदा ही नन्दनन्दन श्रीकृष्णकी लीलाओंसे सुशोभित होते हैं; किनारेपर बढ़कर खिली हुई मल्लिका और कदम्बके पुष्प-परागसे जिसका वर्ण उज्ज्वल हो रहा है, जो अपने जलमें डुबकी लगानेवाले मनुष्योंको भवसागरसे पार कर देती हैं, वह कलिन्द-कन्या यमुना सदा हमारे मानसिक मलको दूर बहावे ॥ ८ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यविरचित श्रीयमुनाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

५५—श्रीयमुनाष्टकम्

कृपापारावारां तपनतनयां तापशमनीं
मुरारिप्रेयस्कां भवभयदवां भक्तवरदाम्।
वियज्ज्वालान्मुक्तां श्रियमपि सुखाप्तेः प्रतिदिनं
सदा धीरो नूनं भजति यमुनां नित्यफलदाम्॥ १॥
मधुवनचारिणि भास्करवाहिनि जाह्नविसङ्गिनि सिन्धुसुते
मधुरिपुभूषिणि माधवतोषिणि गोकुलभीतिविनाशकृते।
जगदघमोचिनि मानसदायिनि केशवकेलिनिदानगते
जय यमुने जय भीतिनिवारिणि सङ्कटनाशिनि पावय माम्॥ २॥
अयि मधुरे मधुमोदविलासिनि शैलविहारिणि वेगभरे
परिजनपालिनि दुष्टनिषूदिनि वाञ्छितकामविलासधरे।

जो कृपाकी समुद्र, सूर्यकुमारी, तापको शान्त करनेवाली, श्रीकृष्णचन्द्रकी प्रेमिका, संसारभीतिके लिये दावानलस्वरूप, भक्तोंको वर देनेवाली और आकाशजालसे मुक्त लक्ष्मीस्वरूपा हैं, उन नित्यफलदायिनी यमुनाजीका धीर पुरुष सुखप्राप्तिके लिये निश्चयपूर्वक निरन्तर प्रतिदिन भजन करता है॥ १॥

हे मधुवनमें विहार करनेवाली! हे भास्करवाहिनि! हे गंगाजीकी सहचरी! हे सिन्धुसुते! हे श्रीमधुसूदनविभूषिणि! हे माधवतुष्टिकारिणि! हे गोकुलका भय दूर करनेवाली! हे जगत्पापविनाशिनि! हे वाञ्छितफलदायिनि! हे कृष्णकेलिकी आश्रयभूता सकलभयनिवारिणी संकटनाशिनी यमुने! तुम्हारी जय हो! जय हो! तुम मुझे पवित्र करो॥ २॥

अयि मधुरे! अयि मधुगन्धविलासिनि! हे पर्वतोंमें विहार करनेवाली! परम वेगवती, अपने तीरवर्ती भक्तजनोंका पालन करनेवाली, दुष्टोंका संहार करनेवाली, इच्छित कामनाओंकी विलासभूमि,

व्रजपुरवासिजनार्जितपातकहारिणि विश्वजनोद्धरिके। जय० ॥ ३ ॥
अतिविपदम्बुधिमग्नजनं भवतापशताकुलमानसकं
गतिमतिहीनमशेषभयाकुलमागतपादसरोजयुगम् ।
ऋणभयभीतिमनिष्कृतिपातककोटिशतायुतपुञ्जतरम्। जय० ॥ ४ ॥
नवजलदद्युतिकोटिलसत्तनुहेममयाभररञ्जितके
तडिदवहेलिपदाञ्चलचञ्चलशोभितपीतसुचैलधरे ।
मणिमयभूषणचित्रपटासनरञ्जितगञ्जितभानुकरे। जय० ॥ ५ ॥

व्रजभूमिनिवासियोंके अर्जित पापोंको हरण करनेवाली तथा सम्पूर्ण जीवोंका उद्धार करनेवाली, सकलभयनिवारिणी संकटनाशिनी यमुने! तुम्हारी जय हो! जय हो! तुम मुझे पवित्र करो ॥ ३ ॥

जो महान् विपत्तिसागरमें निमग्न है, सैकड़ों सांसारिक संतापोंसे जिसका मन व्याकुल है, जो गति (आश्रय) और मति (विचार)-से शून्य तथा सब प्रकारके भयोंसे व्याकुल है, जो ऋण और भयसे दबा हुआ तथा सैकड़ों-हजारों-करोड़ों प्रतिकारशून्य पापोंका पुतला है, तुम्हारे चरणकमल-युगलमें प्राप्त हुए ऐसे मुझको, हे सकलभयनिवारिणी संकटनाशिनी यमुने! तुम्हारी जय हो! जय हो! तुम मुझे पवित्र करो ॥ ४ ॥

तुम्हारा शरीर करोड़ों नवीन मेघोंकी कान्तिसे सुशोभित तथा सुवर्णमय आभूषणोंसे विभूषित है, जिसका चंचल अंचल चपलाकी भी अवहेलना करता है, ऐसे पीत दुकूलको धारण करके तुम परम शोभायमान हो रही हो तथा मणिमय आभूषण और चित्र-विचित्र वस्त्र एवं आसनसे रंजित होकर तुमने सूर्यकी किरणोंको भी कुण्ठित कर दिया है; हे सकल भयनिवारिणी संकटहारिणी यमुने! तुम्हारी जय हो, जय हो! तुम मुझे पवित्र करो ॥ ५ ॥

शुभपुलिने मधुमत्तयदूद्भवरासमहोत्सवकेलिभरे
उच्चकुलाचलराजितमौक्तिकहारमयाभररोदसिके ।
नवमणिकोटिकभास्करकञ्चुकिशोभिततारकहारयुते। जय० ॥ ६ ॥
करिवरमौक्तिकनासिकभूषणवातचमत्कृतचञ्चलके
मुखकमलामलसौरभचञ्चलमत्तमधुव्रतलोचनिके ।
मणिगणकुण्डललोलपरिस्फुरदाकुलगण्डयुगामलके। जय० ॥ ७ ॥
कलरवनूपुरहेममयाचितपादसरोरुहसारुणिके
धिमिधिमिधिमिधिमितालविनोदितमानसमञ्जुलपादगते।
तव पदपङ्कजमाश्रितमानवचित्तसदाखिलतापहरे । जय० ॥ ८ ॥

हे सुन्दर तटोंवाली! हे मधुमत्त-यदुकुलोत्पन्न श्रीकृष्ण और बलरामके रासमहोत्सवकी क्रीडाभूमि! हे ऊँचे-ऊँचे कुलपर्वतोंकी श्रेणियोंपर शोभायमान मुक्तावलीरूप आभूषणोंसे पृथ्वी और आकाशको विभूषित करनेवाली, हे करोड़ों भास्करोंके समान नवीन मणियोंकी कंचुकीसे सुशोभित तथा तारावलीरूप हारसे युक्त, सकलभयनिवारिणी संकटहारिणी यमुने! तुम्हारी जय हो, जय हो! तुम मुझे पवित्र करो ॥ ६ ॥

तुम्हारी नासिकाकी भूषणरूप गजमुक्ता वायुसे चंचल होकर झिलमिला रही है, तुम्हारे नेत्ररूप मतवाले भौंरे मानो मुखकमलकी सुवाससे चंचल हो रहे हैं तथा दोनों अमल कपोल हिलते हुए मणिमय कुण्डलोंकी झलकसे झिलमिला रहे हैं, हे सकलभयनिवारिणी संकटहारिणी यमुने! तुम्हारी जय हो, जय हो! तुम मुझे पवित्र करो ॥ ७ ॥

तुम्हारे अरुण चरणकमल सुवर्णमय नूपुरोंके कलरवसे युक्त हैं, तुम मनको प्रसन्न करनेवाली 'धिमि-धिमि' स्वरमयी मनोहर गतिसे गमन करती हो, जो मनुष्य तुम्हारे चरणकमलोंमें चित्त लगाता है, तुम उसके सम्पूर्ण ताप हर लेती हो; हे सकलभयनिवारिणी संकटहारिणी यमुने! तुम्हारी जय हो! जय हो! तुम मुझे पवित्र करो॥ ८ ॥

भवोत्तापाम्भोधौ निपतितजनो दुर्गतियुतो
यदि स्तौति प्रातः प्रतिदिनमनन्याश्रयतया।
हयाह्रेषैः कामं करकुसुमपुञ्जैरविरतं
सदा भोक्ता भोगान्मरणसमये याति हरिताम्॥ ९॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीयमुनाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

५६—श्रीयमुनाष्टकम्

नमामि यमुनामहं सकलसिद्धिहेतुं मुदा
मुरारिपदपङ्कजस्फुरदमन्दरेणूत्कटाम्।
तटस्थनवकाननप्रकटमोदपुष्पाम्बुना
सुरासुरसुपूजितस्मरपितुः श्रियं बिभ्रतीम्॥ १॥

जो मनुष्य संसारके सन्तापसमुद्रमें डूबकर अत्यन्त दुर्गतिग्रस्त हो रहा है, वह यदि प्रतिदिन प्रातःकाल अनन्यचित्तसे (इस स्तोत्रद्वारा श्रीयमुनाजीकी) स्तुति करेगा, वह (यावज्जीवन) घोड़ोंकी हिनहिनाहट तथा हाथोंमें पुष्पपुंजसे सुशोभित होकर, निरन्तर सम्पूर्ण भोगोंको भोगेगा और मरनेके समय भगवद्रूप हो जायगा ॥ ९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यविरचित श्रीयमुनाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

मैं सम्पूर्ण सिद्धियोंकी हेतुभूता श्रीयमुनाजीको सानन्द नमस्कार करता हूँ, जो भगवान् मुरारिके चरणारविन्दोंकी चमकीली और अमन्द महिमावाली धूल धारण करनेसे अत्यन्त उत्कर्षको प्राप्त हुई हैं और तटवर्ती नूतन काननोंके सुगन्धित पुष्पोंसे सुवासित जलराशिके द्वारा देवदानववन्दित प्रद्युम्नपिता भगवान् श्रीकृष्णकी श्याम सुषमाको धारण करती हैं ॥ १ ॥

कलिन्दगिरिमस्तके पतदमन्दपूरोज्ज्वला
विलासगमनोल्लसत्प्रकटगण्डशैलोन्नता।
सघोषगतिदन्तुरा समधिरूढदोलोत्तमा
मुकुन्दरतिवर्द्धिनी जयति पद्मबन्धोः सुता॥ २॥
भुवं भुवनपावनीमधिगतामनेकस्वनैः
प्रियाभिरिव सेवितां शुकमयूरहंसादिभिः।
तरङ्गभुजकङ्कणप्रकटमुक्तिकावालुकां
नितम्बतटसुन्दरीं नमत कृष्णतुर्यप्रियाम्॥ ३॥

कलिन्दपर्वतके शिखरपर गिरती हुई तीव्र वेगवाली जलधारासे जो अत्यन्त उज्ज्वल जान पड़ती हैं, लीलाविलासपूर्वक चलनेके कारण शोभायमान हैं, मार्गमें प्रकट हुई चट्टानोंसे जिनका प्रवाह कुछ ऊँचा हो जाता है, मधुर घोषयुक्त गतिसे आगे बढ़ती— ऊँची-नीची होती हुई चलती हैं और ऊँचे-नीचे प्रवाहरूप झूलेपर उतरती हुई-सी प्रतीत होती हैं, भगवान् श्रीकृष्णके प्रति प्रगाढ़ अनुरागकी वृद्धि करनेवाली वे सूर्यसुता यमुना सबसे विजयिनी हो रही हैं॥ २॥

जो इस भूतलपर पधारकर समस्त भुवनको पवित्र कर रही हैं, शुक-मयूर और हंस आदि पक्षी नाना-प्रकारके कलरवद्वारा प्रिय सखियोंकी भाँति जिनकी सेवा कर रहे हैं, जिनकी तरङ्गरूपी भुजाओंके कंगनमें जड़े हुए मुक्ताओंकी भाँति बालुका चमक रही है तथा जो नितम्बतटरूप तटोंसे अत्यन्त सुन्दर जान पड़ती हैं, उन श्रीकृष्णकी चौथी पटरानी श्रीयमुनाजीको नमस्कार करो॥ ३॥

अनन्तगुणभूषिते शिवविरञ्चिदेवस्तुते
घनाघननिभे सदा ध्रुवपराशराभीष्टदे।
विशुद्धमथुरातटे सकलगोपगोपीवृते
कृपाजलधिसंश्रिते मम मनः सुखं भावय॥४॥
यया चरणपद्मजा मुररिपोः प्रियम्भावुका
समागमनतोऽभवत् सकलसिद्धिदा सेवताम्।
तया सदृशतामियात् कमलजा सपत्नीव यद्धरि-
प्रियकलिन्दया मनसि मे सदा स्थीयताम्॥५॥

देवि यमुने! तुम अनन्त गुणोंसे विभूषित हो। शिव और ब्रह्मा आदि देवता तुम्हारी स्तुति करते हैं। मेघोंकी गम्भीर घटाके समान तुम्हारी अंगकान्ति सदा श्याम है। ध्रुव और पराशर-जैसे भक्तजनोंको तुम अभीष्ट वस्तु प्रदान करनेवाली हो। तुम्हारे तटपर विशुद्ध मथुरापुरी सुशोभित है। समस्त गोप और गोपसुन्दरियाँ तुम्हें घेरे रहती हैं। तुम करुणासागर भगवान् श्रीकृष्णके आश्रित हो। मेरे अन्तःकरणको सुखी बनाओ॥४॥

भगवान् विष्णुके चरणारविन्दोंसे प्रकट हुई गंगा जिनसे मिलनेके कारण ही भगवान्‌को प्रिय हुई और अपने सेवकोंके लिये सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाली हो सकीं, उन यमुनाजीकी समता केवल लक्ष्मीजी कर सकती हैं और वह भी एक सपत्नीके सदृश। ऐसी मुकुन्दवल्लभा श्रीकृष्णप्रिया कालिन्दनन्दिनी यमुना सदा मेरे मनमें निवास करें॥५॥

नमोऽस्तु यमुने सदा तव चरित्रमत्यद्भुतं
न जातु यमयातना भवति ते पयःपानतः।
यमोऽपि भगिनीसुतान् कथमु हन्ति दुष्टानपि
प्रियो भवति सेवनात् तव हरेर्यथा गोपिकाः ॥ ६ ॥
ममास्तु तव सन्निधौ तनुनवत्वमेतावता
न दुर्लभतमा रतिर्मुररिपौ मुकुन्दप्रिये।
अतोऽस्तु तव लालना सुरधुनी परं सङ्गमात्
तवैव भुवि कीर्तिता न तु कदापि पुष्टिस्थितैः ॥ ७ ॥
स्तुतिं तव करोति कः कमलजासपत्नि प्रिये
हरेर्यदनुसेवया भवति सौख्यमामोक्षतः।

यमुने! तुम्हें सदा नमस्कार है। तुम्हारा चरित्र अत्यन्त अद्भुत है। तुम्हारा जल पीनेसे कभी यमयातना नहीं भोगनी पड़ती है। अपनी बहिनके पुत्र दुष्ट हों तो भी यमराज उन्हें कैसे मार सकते हैं। तुम्हारी सेवासे मनुष्य गोपाङ्गनाओंकी भाँति श्यामसुन्दर श्रीकृष्णका प्रिय हो जाता है॥ ६॥

श्रीकृष्णप्रिये यमुने! तुम्हारे समीप मेरे शरीरका नवनिर्माण हो—मुझे नूतन शरीर धारण करनेका अवसर मिले। इतनेसे ही मुरारि श्रीकृष्णमें प्रगाढ़ अनुराग दुर्लभ नहीं रह जाता। अतः तुम्हारी अच्छी तरह स्तुति-प्रशंसा होती रहे—तुमको लाड़ लड़ाया जाय। तुमसे मिलनेके कारण ही देवनदी गङ्गा इस भूतलपर उत्कृष्ट बतायी गयी हैं, परंतु पुष्टिमार्गीय वैष्णवोंने तुम्हारे संगमके बिना केवल गंगाकी कभी स्तुति नहीं की है॥ ७॥

लक्ष्मीकी सौतने हरिप्रिये यमुने! तुम्हारी स्तुति कौन कर सकता

इयं तव कथाधिका सकलगोपिकासङ्गमस्मर-
श्रमजलाणुभिः सकलगात्रजैः सङ्गमः ॥ ८ ॥
तवाष्टकमिदं मुदा पठति सूरसूते सदा
समस्तदुरितक्षयो भवति वै मुकुन्दे रतिः ।
तया सकलसिद्धयो मुररिपुश्च सन्तुष्यति
स्वभावविजयो भवेद् वदति वल्लभः श्रीहरेः ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीमद्वल्लभाचार्यविरचितं श्रीयमुनाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

है? भगवान्‌की निरन्तर सेवासे मोक्षपर्यन्त सुख प्राप्त होता है परंतु तुम्हारे लिये विशेष महत्त्वकी बात यह है कि तुम्हारे जलका सेवन करनेसे सम्पूर्ण गोपसुन्दरियोंके साथ श्रीकृष्णके समागमसे जो प्रेमलीलाजनित स्वेदजलकण सम्पूर्ण अंगोंसे प्रकट होते हैं, उनका सम्पर्क सुलभ हो जाता है ॥ ८ ॥

सूर्यकन्ये यमुने! जो तुम्हारी इस आठ श्लोकोंकी स्तुतिका प्रसन्नतापूर्वक सदा पाठ करता है, उसके सारे पापोंका नाश हो जाता है और उसे भगवान् श्रीकृष्णका प्रगाढ़ प्रेम प्राप्त होता है। इतना ही नहीं, सारी सिद्धियाँ सुलभ हो जाती हैं, भगवान् श्रीकृष्ण सन्तुष्ट होते हैं और स्वभावपर भी विजय प्राप्त हो जाती है। यह श्रीहरिके वल्लभका कथन है ॥ ९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमद्वल्लभाचार्यविरचित श्रीयमुनाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

नर्मदास्तोत्रम्

५७—नर्मदास्तुतिः

व्यास उवाच

जय भगवति देवि नमो वरदे जय पापविनाशिनि बहुफलदे।
जय शुम्भनिशुम्भकपालधरे प्रणमामि तु देवनरार्तिहरे॥ १॥
जय चन्द्रदिवाकरनेत्रधरे जय पावकभूषितवक्त्रवरे।
जय भैरवदेहनिलीनपरे जय अन्धकरक्तविशोषकरे॥ २॥
जय महिषविमर्दिनि शूलकरे जय लोकसमस्तकपापहरे।
जय देवि पितामहरामनते जय भास्करशक्रशिरोऽवनते॥ ३॥

व्यासजी बोले—हे वरदायिनी देवि! हे नर्मदे! तुम्हारी जय हो। हे पापोंका नाश करनेवाली और अनन्त फल देनेवाली देवि! तुम्हारी जय हो। हे शुम्भ-निशुम्भके मुण्डोंको धारण करनेवाली देवि! तुम्हारी जय हो। देवताओं तथा मनुष्योंकी पीड़ा हरनेवाली हे देवि! मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ॥ १॥

हे सूर्य-चन्द्रमारूपी नेत्रोंको धारण करनेवाली! तुम्हारी जय हो। हे अग्निके समान देदीप्यमान मुखसे शोभित होनेवाली! तुम्हारी जय हो। हे भैरवशरीरमें लीन रहनेवाली और अन्धकासुरके रक्तका शोषण करनेवाली देवि! तुम्हारी जय हो, जय हो॥ २॥

महिषासुरका मर्दन करनेवाली, त्रिशूलधारिणी और लोकके समस्त पापोंको हर लेनेवाली हे भवानि! तुम्हारी जय हो। ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य और इन्द्रसे विनयपूर्वक नमस्कृत होनेवाली हे देवि! तुम्हारी जय हो, जय हो॥ ३॥

जय षण्मुखगणमुखसुरगणनुते जय सागरगामिनि शम्भुनुते।
जय दुःखदरिद्रविनाशकरे जय पुत्रकलत्रविवृद्धिकरे॥ ४॥
जय देवि समस्तशरीरधरे जय नाकविदर्शिनि दुःखहरे।
जय व्याधिविनाशिनि मोक्षकरे जय वाञ्छितदायिनि सिद्धिवरे॥ ५॥
एतद् व्यासकृतं स्तोत्रं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
गृहे वा शुद्धभावेन कामक्रोधविवर्जितः॥ ६॥
तस्य व्यासो भवेत्प्रीतः प्रीतश्च वृषवाहनः।
प्रीता स्यान्नर्मदा देवी सर्वपापक्षयङ्करी॥ ७॥
न ते यान्ति यमालोकं यैः स्नाता भुवि नर्मदा॥ ८॥

॥ इति श्रीस्कन्दमहापुराणे रेवाखण्डे व्यासकृता नर्मदास्तुतिः सम्पूर्णा॥

षण्मुख गणेश और आदितिपुत्रोंके द्वारा वन्दित होनेवाली हे देवि! तुम्हारी जय हो। शिवके द्वारा पूजित एवं सागरमें मिलनेवाली हे देवि! तुम्हारी जय हो। दुःख और दरिद्रताका नाश तथा पुत्र-कलत्रकी वृद्धि करनेवाली हे देवि! तुम्हारी जय हो, जय हो॥ ४॥

हे देवि! तुम्हारी जय हो। तुम समस्त शरीरोंको धारण करनेवाली, स्वर्गलोकका दर्शन करानेवाली और दुःखहारिणी हो। हे व्याधिविनाशिनी देवि! तुम्हारी जय हो। मोक्ष तुम्हारे करतलगत है। मनोवाञ्छित फल देनेवाली श्रेष्ठ सिद्धियोंकी आवास हे देवि! तुम्हारी जय हो॥ ५॥

जो काम-क्रोधसे रहित होकर शुद्धभावसे भगवान् शिवके समीप अथवा घरपर ही व्यासजीद्वारा किये गये इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसपर व्यासजी प्रसन्न हो जाते हैं, वृषवाहन भगवान् शिव प्रसन्न हो जाते हैं और सभी पापोंका विनाश करनेवाली देवी नर्मदा भी प्रसन्न हो जाती हैं। पृथ्वीपर जिनके द्वारा नर्मदामें स्नान किया जाता है, वे यमके लोकमें नहीं जा पाते हैं॥ ६—८॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके रेवाखण्डमें व्यासकृत नर्मदास्तुति सम्पूर्ण हुई॥

५८ — नर्मदाष्टकम्

सबिन्दुसिन्धुसुस्खलत्तरङ्गभङ्गरञ्जितं
द्विषत्सु पापजातजातकारिवारिसंयुतम्।
कृतान्तदूतकालभूतभीतिहारिवर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे॥ १ ॥

त्वदम्बुलीनदीनमीनदिव्यसम्प्रदायकं
कलौ मलौघभारहारि सर्वतीर्थनायकम्।
सुमच्छकच्छनक्रचक्रचक्रवाकशर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे॥ २ ॥

महागभीरनीरपूरपापधूतभूतलं
ध्वनत्समस्तपातकारिदारितापदाचलम्।

मृत्युके दूत कालसे प्राप्त होनेवाले भयसे रक्षा करनेवाला कल्याण प्रदान करनेवाली हे भगवति नर्मदे! पवित्र जल-बिन्दुओंसे युक्त महासिन्धुमें प्रकट होनेवाली तरंगभंगिमाओंसे सुशोभित तथा द्वेष करनेवालोंके पापसमूहोंसे होनेवाले कष्टोंको दूर करनेमें समर्थ जलसे युक्त आपके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूँ॥ १ ॥

सुन्दर मछलियों, कछुओं, घड़ियालों, चकवा पक्षियों तथा हंसोंका कल्याण करनेवाली हे भगवति नर्मदे! आपके जलमें विलीन दीन मत्स्यसमूहको दिव्यता प्रदान करनेवाली कलियुगमें पापसमूहके भारी बोझ दूर करनेमें समर्थ तथा सभी तीर्थोंके नायकस्वरूपा आपके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूँ॥ २ ॥

महान् अगाध प्रवाह करनेवाली सम्पूर्ण विश्वको आश्चर्यचकित तथा सांसारिक प्राणियोंको निरालस्य शक्ति प्रदान करनेवाली हे भगवति

जगल्लये महाभये मृकण्डसूनुहर्म्यदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥ ३ ॥
गतं तदैव मे भयं त्वदम्बुवीक्षितं यदा
मृकण्डसूनुशौनकासुरारिसेवि सर्वदा ।
पुनर्भवाब्धिजन्मजं भवाब्धिदुःखवर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥ ४ ॥
अलक्षलक्षकिन्नरामरासुरादिपूजितं
सुलक्षनीरतीरधीरपक्षिलक्षकूजितम् ।
वसिष्ठशिष्टपिप्पलादिकर्दमादिशर्मदे
त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥ ५ ॥

नर्मदे! अत्यन्त गहरे जलसे धरातलके सम्पूर्ण प्राणियोंको धो डालनेवाली और शब्द करती हुई समस्त पापोंके शत्रुरूप तथा विपत्तियोंके महाद्रुमको विदीर्ण कर देनेवाली आपके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

भवसागरके दुःखसे रक्षाके लिये कवच प्रदान करनेवाली हे भगवति नर्मदे! जब मुझे आपके जलका दर्शन हुआ, उसी समय मेरा भवसागरमें बार-बार जन्म लेनेसे उत्पन्न होनेवाला मेरा सारा सांसारिक भय दूर हो गया। मार्कण्डेय तथा शौनक आदि ऋषियों और देवताओंके द्वारा सेवित आपके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ४ ॥

वसिष्ठ, शिष्ट, पिप्पलादि तथा कर्दम आदि मुनियोंका कल्याण करनेवाली हे भगवति नर्मदे! विशुद्ध भावसे लाखों किन्नरों, देवताओं, असुरों आदिसे पूजित तथा सुन्दर शोभनेवाले जलमें गुणोंसे लाखों कोटि लक्षणोंवाले लाखों पक्षियोंके कलरवसे निनादित आपके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ५ ॥

सनत्कुमारनाचिकेतकश्यपादिषट्पदै-

र्धृतं स्वकीयमानसेषु नारदादिषट्पदैः।

रवीन्दुरन्तिदेवदेवराजकर्मशर्मदे

त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥ ६ ॥

अलक्षलक्षलक्षपापलक्षसारसायुधं

ततस्तु जीवजन्तुतन्तुभुक्तिमुक्तिदायकम्।

विरञ्चिविष्णुशङ्करस्वकीयधामवर्मदे

त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥ ७ ॥

अहोऽमृतं स्वनं श्रुतं महेशकेशजातटे

किरातसूतवाडवेषु पण्डिते शठे नटे।

सूर्य, चन्द्र, रन्तिदेव और इन्द्रके कर्मोंको निर्विघ्न सम्पन्न करनेवाली हे भगवति नर्मदे! सनत्कुमार, नाचिकेत, कश्यप और नारद आदि भ्रमररूपी ऋषिगणोंके द्वारा अपने हृदयोंमें धारण किये गये आपके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ६ ॥

ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवको अपना धामरूपी कवच देनेवाली हे भगवति नर्मदे! मनुष्योंके परोक्ष तथा प्रत्यक्ष लाखों पापोंका नाश करनेके लिये महान् विनाशकारी अस्त्रों सारस नामवाले आयुधोंसे सम्पन्न और जीव-जन्तुओंके समूहको भोग तथा मोक्ष प्रदान करनेवाले आपके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ७ ॥

चार वर्णों और आश्रमोंका भेद न करके सभी प्राणियोंका कल्याण प्रदान करनेवाली हे भगवति नर्मदे! भगवान् शिवके जटाजूटसे उद्भूत आपके तटपर किरात, सूत, ब्राह्मण, पण्डित, मूर्ख, नट—इन सबको

दुरन्तपापतापहारि सर्वजन्तुशर्मदे

त्वदीयपादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥ ८ ॥

इदं तु नर्मदाष्टकं त्रिकालमेव ये सदा

पठन्ति ते निरन्तरं न यान्ति दुर्गतिं कदा।

सुलभ्य देहदुर्लभं महेशधामगौरवं

पुनर्भवा नरा न वै विलोकयन्ति रौरवम् ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं नर्मदाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

मुदे! आपकी श्री अमृतमयी तरंग-भाँति सुभावी पड़ी, आपके चरणकमलको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ८ ॥

जो लोग नित्य तीनों कालों (प्रातः, मध्याह्न एवं सायं)-में इस नर्मदाष्टकका निरन्तर पाठ करते हैं, वे कभी भी दुर्गतिको प्राप्त नहीं होते। बार-बार जन्म लेनेवाले मनुष्य (इसके पाठसे) देहधारियोंके लिये परम दुर्लभ शिवलोकका गौरव प्राप्त करके पुनः रौरव नरकमें नहीं पड़ते ॥ ९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यविरचित नर्मदाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

प्रकीर्णस्तोत्राणि

५९—शीतलाष्टकम्

अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, शीतला देवता, लक्ष्मी बीजम्, भवानी शक्तिः, सर्वविस्फोटकनिवृत्तये जपे विनियोगः ।

ईश्वर उवाच

वन्देऽहं शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ।
मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालङ्कृतमस्तकाम् ॥ १ ॥

वन्देऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् ।
यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥ २ ॥

इस श्रीशीतलास्तोत्रके ऋषि महादेवजी, छन्द अनुष्टुप्, देवता शीतला माता, बीज लक्ष्मीजी तथा शक्ति भवानी देवी हैं। सभी प्रकारके विस्फोटक (चेचक आदि)-के निवारणहेतु इस स्तोत्रका जपमें विनियोग होता है।

ईश्वर बोले—गर्दभपर विराजमान, दिगम्बरा, हाथमें मार्जनी (झाड़ू) तथा कलश धारण करनेवाली, सूपसे अलंकृत मस्तकवाली भगवती शीतलाकी मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

मैं सभी प्रकारके भय तथा रोगोंका नाश करनेवाली उन भगवती शीतलाकी वन्दना करता हूँ, जिनकी शरणमें जानेसे विस्फोटक (चेचक)-का बड़े-से-बड़ा भय दूर हो जाता है ॥ २ ॥

शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः ।
विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य प्रणश्यति ॥ ३ ॥
यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा पूजयते नरः ।
विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ ४ ॥
शीतले ज्वरदग्धस्य पूतिगन्धयुतस्य च ।
प्रणष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहुर्जीवनौषधम् ॥ ५ ॥
शीतले तनुजान् रोगान्नृणां हरसि दुस्त्यजान् ।
विस्फोटकविदीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ॥ ६ ॥
गलगण्डग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् ।
त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यान्ति संक्षयम् ॥ ७ ॥

[चेचककी] जलनसे पीड़ित जो व्यक्ति 'शीतले शीतले'—ऐसा उच्चारण करता है, उसका भयंकर विस्फोटकरोगजनित भय शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ॥ ३ ॥

जो मनुष्य आपकी प्रतिमाको (हाथमें) लेकर जलके मध्य स्थित हो आपकी पूजा करता है, उसके घरमें विस्फोटक रोगका भीषण भय नहीं उत्पन्न होता है ॥ ४ ॥

हे शीतले! ज्वरसे संतप्त, मवादकी दुर्गन्धसे युक्त तथा विनष्ट नेत्र-ज्योतिवाले मनुष्यके लिये आपको ही जीवनरूपी औषधि कहा गया है ॥ ५ ॥

हे शीतले! मनुष्योंके शरीरमें होनेवाले तथा अत्यन्त कठिनाईसे दूर किये जानेवाले रोगोंको आप हर लेती हैं, एकमात्र आप ही विस्फोटक-रोगसे विदीर्ण मनुष्योंके लिये अमृतकी वर्षा करनेवाली हैं ॥ ६ ॥

हे शीतले! मनुष्योंके गलगण्डग्रह आदि तथा और भी अन्य प्रकारके जो भीषण रोग हैं, वे आपके ध्यानमात्रसे नष्ट हो जाते हैं ॥ ७ ॥

न मन्त्रो नौषधं तस्य पापरोगस्य विद्यते।
त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्यामि देवताम्॥ ८ ॥
मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम्।
यस्त्वां संचिन्तयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते॥ ९ ॥
अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः प्रपठेत्सदा।
विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते॥ १० ॥
श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः।
उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत्॥ ११ ॥
शीतले त्वं जगन्माता शीतले त्वं जगत्पिता।
शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमो नमः॥ १२ ॥

इस पापरोगकारी पाप-रोगसे न कोई औषधि है और न मन्त्र ही है। हे शीतले! एकमात्र आप जननीको छोड़कर [उस रोगसे मुक्ति पानेके लिये] मुझे कोई दूसरा देवता नहीं दिखायी देता॥ ८॥

हे देवि! जो प्राणी मृणाल-तन्तुके समान कोमल स्वभाववाली और नाभि तथा हृदयके मध्य विराजमान रहनेवाली आप भगवतीका ध्यान करता है, उसकी मृत्यु नहीं होती है॥ ९॥

जो मनुष्य भगवती शीतलाके इस अष्टकका नित्य पाठ करता है, उसके घरमें विस्फोटकका घोर भय नहीं रहता॥ १०॥

मनुष्योंको विघ्न-बाधाओंके विनाशके लिये श्रद्धा तथा भक्तिसे युक्त होकर इस परम कल्याणकारी स्तोत्रका पाठ और श्रवण करना चाहिये॥ ११॥

हे शीतले! आप जगत्की माता हैं, हे शीतले! आप जगत्के पिता हैं, हे शीतले! आप जगत्का पालन करनेवाली हैं, आप शीतलाको बार-बार नमस्कार है॥ १२॥

रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाखनन्दनः ।
शीतलावाहनश्चैव दूर्वाकन्दनिकृन्तनः ॥ १३ ॥
एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत् ।
तस्य गेहे शिशूनां च शीतलारुङ् न जायते ॥ १४ ॥
शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्य कस्यचित् ।
दातव्यं च सदा तस्मै श्रद्धाभक्तियुताय वै ॥ १५ ॥

॥ इति श्रीस्कन्दमहापुराणे शीतलाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

६० — श्रीसंकटास्तुतिः

अयि गिरिनन्दिनि नन्दितमेदिनि विश्वविनोदिनि नन्दिनुते
गिरिवरविन्ध्यशिरोऽधिनिवासिनि विष्णुविलासिनि जिष्णुनुते ।

जो व्यक्ति रासभ, गर्दभ, खर, वैशाखनन्दन, शीतलावाहन, दूर्वाकन्दनिकृन्तन— [भगवती शीतलाके वाहन] इन नामोंका उनके समक्ष पाठ करता है, उसके घरमें बच्चोंको शीतलारोग नहीं होता है ॥ १३-१४ ॥

इस शीतलाष्टकस्तोत्रको जिस किसी अनधिकारीको नहीं देना चाहिये, अपितु भक्ति तथा श्रद्धासे सम्पन्न व्यक्तिको ही सदा यह स्तोत्र प्रदान करना चाहिये ॥ १५ ॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणमें वर्णित शीतलाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

पर्वतराज हिमालयकी कन्यारूपिणी, पृथ्वीको आनन्दित करनेवाली, संसारको हर्षित रखनेवाली, नन्दिगणसे नमस्कार की जानेवाली, गिरिश्रेष्ठ विन्ध्याचलके शिखरपर निवास करनेवाली, भगवान् विष्णुको

भगवति हे शितिकण्ठकुटुम्बिनि भूरिकुटुम्बिनि भूरिकृते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १ ॥
सुरवरवर्षिणि दुर्धरधर्षिणि दुर्मुखमर्षिणि हर्षरते
त्रिभुवनपोषिणि शंकरतोषिणि कल्मषमोषिणि घोषरते ।
दनुजनिरोषिणि दुर्मदशोषिणि दुर्मुनिरोषिणि सिन्धुसुते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ २ ॥
अयि जगदम्ब कदम्बवनप्रियवासिनि तोषिणि हासरते
शिखरिशिरोमणितुङ्गहिमालयशृङ्गनिजालयमध्यगते ।

प्रदान करनेवाली, इन्द्रसे नमस्कृत होनेवाली, भगवान् शिवजीकी भार्याके रूपमें प्रतिष्ठित, विशाल कुटुम्बवाली और ऐश्वर्य प्रदान करनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ १ ॥

देवराज इन्द्रको समृद्धिशाली बनानेवाली, दुर्धर तथा दुर्मुख नामक दैत्योंका विनाश करनेवाली, सर्वदा हर्षित रहनेवाली, तीनों लोकोंका पालन-पोषण करनेवाली, भगवान् शिवको सन्तुष्ट रखनेवाली, पापको दूर करनेवाली, घोर गर्जन करनेवाली, दैत्योंपर भीषण क्रोध करनेवाली, मदान्धोंके मदका हरण कर लेनेवाली, सदाचारहीन मुनिजनोंपर क्रोध करनेवाली और समुद्रकी कन्या महालक्ष्मीके रूपमें प्रतिष्ठित हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ २ ॥

जगज्जननी मातास्वरूपिणी, कदम्बवृक्षके वनमें प्रेमपूर्वक निवास करनेवाली, सदा सन्तुष्ट रहनेवाली, हास-परिहासमें सदा रत रहनेवाली, पर्वतोंमें श्रेष्ठ ऊँचे हिमालयकी चोटीपर अपने भवनमें

मधुमधुरे मधुकैटभगञ्जिनि महिषविदारिणि रासरते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥ ३॥
अयि निजहुंकृतिमात्रनिराकृतधूम्रविलोचनधूम्रशते
समरविशोषितरोषितशोणितबीजसमुद्भवबीजलते।
शिवशिवशुम्भनिशुम्भमहाहवतर्पितभूतपिशाचरते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥ ४॥
अयि शतखण्डविखण्डितरुण्डवितुण्डितशुण्डगजाधिपते
निजभुजदण्डनिपातितचण्डविपाटितमुण्डभटाधिपते।
रिपुगजगण्डविदारणचण्डपराक्रमशौण्डमृगाधिपते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥ ५॥

विलासमग्न रहनेवाली, मधुसे भी अधिक मधुर स्वभाववाली, मधु-कैटभका संहार करनेवाली, महिषको विदीर्ण कर डालनेवाली और रासक्रीडामें मग्न रहनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ ३॥

अपने हुंकारमात्रसे धूम्रलोचन तथा धूम्र आदि सैकड़ों असुरोंको भस्म कर डालनेवाली, युद्धभूमिमें कुपित रक्तबीजके रक्तसे उत्पन्न हुए अन्य रक्तबीजसमूहोंका रक्त पी जानेवाली और शुम्भ-निशुम्भ नामक दैत्योंके महायुद्धमें तृप्त किये गये मङ्गलकारी शिवके भूत-पिशाचोंके प्रति अनुराग रखनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ ४॥

गजाधिपतिके बिना सूँड़के धड़को काट-काटकर सैकड़ों टुकड़े कर देनेवाली, रणभूमिमें चण्ड-मुण्ड नामके दैत्योंको अपने भुज-दण्डसे मार मारकर विदीर्ण कर देनेवाली, शत्रुओंके हाथियोंके गण्डस्थलोंको भग्न करनेमें उत्कट पराक्रमसे सम्पन्न सिंहपर आरूढ़ होनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ ५॥

धनुरनुषङ्गरणक्षणसङ्गपरिस्फुरदङ्गनटत्कटके
कनकपिशङ्गपृषत्कनिषङ्गरसद्भटशृङ्गहताबटुके ।
हतचतुरङ्गबलक्षितिरङ्गघटद् बहुरङ्गरटद् बटुके
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ ६ ॥
अयि रणदुर्मदशत्रुवधोदितदुर्धरनिर्भरशक्तिभृते
चतुरविचारधुरीणमहाशयदूतकृतप्रमथाधिपते ।
दुरितदुरीहदुराशयदुर्मतिदानवदूतदुरन्तगते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ ७ ॥
अयि शरणागतवैरिवधूजनवीरवराभयदायिकरे
त्रिभुवनमस्तकशूलविरोधिशिरोऽधिकृतामलशूलकरे ।

समरभूमिमें धनुष धारण कर अपने शरीरको केवल हिलानेमात्रसे शत्रुदलको कम्पित कर देनेवाली, स्वर्णिम पीले बाणोंके तीर और तरकशसे युक्त, भीषण योद्धाओंका सिर काटनेवाली और [हाथी, घोड़ा, रथ, पैदल] चारों प्रकारकी सेनाओंका संहार करके रणभूमिमें अनेक प्रकारकी शब्दध्वनि करनेवाले बटुकोंको उत्पन्न करनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ ६ ॥

रणभूमिमें मदोन्मत्त शत्रुओंके वधसे बढ़ी हुई अदम्य तथा पूर्ण शक्ति धारण करनेवाली, चातुर्यपूर्ण विचारवाले लोगोंमें श्रेष्ठ और गम्भीर कल्पनावाले प्रमथाधिपति भगवान् शंकरको दूत बनानेवाली, पापी दूषित कामनाओं तथा कुत्सित विचारोंवाले दुर्बुद्धि दानवोंके दूतोंसे न जानी जा सकनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ ७ ॥

शरणागत शत्रुओंकी स्त्रियोंके वीर पतियोंको अभय प्रदान करनेवाले हाथसे शोभा पानेवाली, तीनों लोकोंको पीड़ित करनेवाले दैत्यशत्रुओंके मस्तकोंपर प्रहार करनेयोग्य तेजोमय त्रिशूल हाथमें धारण करनेवाली तथा

दुमिदुमितामरदुन्दुभिनादमहोमुखरीकृतदिङ्निकरे
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ ८ ॥
सुरललनाततथेयितथेयितथाभिनयोदरनृत्यरते
कृतकुकुथाकुकुथोदिडदाडिकतालकुतूहलगानरते ।
धुधुकुटधूधुटधिन्धिमितध्वनिधीरमृदङ्गनिनादरते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ ९ ॥
जय जय जाप्यजये जयशब्दपरस्तुतितत्परविश्वनुते
झणझणझिञ्झिमझिंकृतनूपुरशिञ्जितमोहितभूतपते ।
नटितनटार्धनटीनटनायकनाटननाटितनाट्यरते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १० ॥
अयि सुमनःसुमनःसुमनःसुमनःसुमनोरमकान्तियुते
श्रितरजनीरजनीरजनीरजनीरजनीकरवक्त्रभृते ।

देवताओंकी दुन्दुभियोंसे 'दुम-दुम'—इस प्रकारकी ध्वनिसे समस्त दिशाओंको बार-बार गुंजित करनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ ८ ॥

देवांगनाओंके तत-था-थेयि-थेयि आदि शब्दोंसे युक्त भावमय नृत्यमें मग्न रहनेवाली, कुकुथा आदि विभिन्न प्रकारकी मात्राओंवाले तालोंसे युक्त आश्चर्यमय गीतोंको सुननेमें लीन रहनेवाली और मृदंगकी धुधुकुट-धुधुट आदि गम्भीर ध्वनिको सुननेमें तत्पर रहनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ ९ ॥

हे जपनीय मन्त्रकी विजयशक्तिस्वरूपिणि! आपकी बार-बार जय हो। जय-जयकार शब्दसहित स्तुति करनेमें तत्पर समस्त संसारके लोगोंसे नमस्कृत होनेवाली, अपने नूपुरके झण-झण झिंझिम शब्दोंसे भूतनाथ भगवान् शंकरको मोहित करनेवाली और नटी-नटोंके नायक प्रसिद्ध नट अर्धनारीश्वर शंकरके नृत्यसे सुशोभित नाट्य देखनेमें तल्लीन रहनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ १० ॥

प्रसन्नचित्त तथा सन्तुष्ट देवताओंके द्वारा अर्पित किये गये पुष्पोंसे

सुनयनविभ्रमरभ्रमरभ्रमरभ्रमरभ्रमराभिद्रुते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ ११ ॥
महितमहाहवमल्लमतल्लिकवल्लितरल्लितभल्लिरते
विरचितवल्लिकपालिकपल्लिकझिल्लिकभिल्लिकवर्गवृते ।
श्रुतकृतफुल्लसमुल्लसितारुणतल्लजपल्लवसल्ललिते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १२ ॥
अयि सुदतीजन लालसमानसमोहनमन्मथराजसुते
अविरलगण्डगलन्मदमेदुरमत्तमतङ्गजराजगते ।
त्रिभुवनभूषणभूतकलानिधिरूपपयोनिधिराजसुते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १३ ॥

अत्यन्त मनोरम कान्ति धारण करनेवाली, निशाचरोंको भय प्रदान करनेवाले शिवजीकी भार्या, पवित्रस्तुतिमें प्रसन्न होनेवाली, चन्द्रमाके समान मुखमण्डलवाली और सुन्दर नेत्रवाले कस्तूरी मृगोंमें व्याकुलता उत्पन्न करनेवाले भौंरोंके तथा भ्रान्तिको दूर करनेवाले ज्ञानियोंसे अनुसरणकी जानेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ ११॥

माननीय महायुद्धके श्रेष्ठ वीरोंके द्वारा (इधर-उधर) घुमाये जाने तथा कलापूर्ण ढंगसे चलाये गये भालोंके युद्धके निरीक्षणमें चित्त लगानेवाली, कृत्रिम लतागृहका निर्माण कर उसका पालन करनेवाली स्त्रियोंकी बस्तीमें 'झिल्लिक' नामक वाद्यविशेष बजानेवाली भिल्लनियोंके समूहसे सेवित होनेवाली और कानपर रखे हुए विकसित सुन्दर रक्तवर्ण तथा श्रेष्ठ कोमल पत्तोंसे सुशोभित होनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ १२॥

सुन्दर दन्तपंक्तिवाली स्त्रियोंके उत्कण्ठापूर्ण मनको मुग्ध कर देनेवाले कामदेवको जीवन प्रदान करनेवाली, निरन्तर मद चूते हुए गण्डस्थलसे युक्त मदोन्मत्त गजराजके सदृश मन्थर गतिवाली और तीनों लोकोंके आभूषणस्वरूप चन्द्रमाके समान कान्तियुक्त सागर-कन्याके रूपमें प्रतिष्ठित हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ १३॥

कमलदलामलकोमलकान्तिकलाकलितामलभालतले
सकलविलासकलानिलयक्रमकेलिचलत्कलहंसकुले ।
अलिकुलसङ्कुलकुवलयमण्डलमौलिमिलद्बकुलालिकुले
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १४ ॥
करमुरलीरववीजितकूजितलज्जितकोकिलमञ्जुमते
मिलितमिलिन्दमनोहरगुञ्जितरञ्जितशैलनिकुञ्जगते ।
निजगणभूतमहाशबरीगणरङ्गणसम्भृतकेलितते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १५ ॥
कटितटपीतदुकूलविचित्रमयूखतिरस्कृतचन्द्ररुचे
जितकनकाचलमौलिमदोर्जितगर्जितकुञ्जरकुम्भकुचे ।

कमलदलके सदृश वक्र, निर्मल और कोमल कान्तिसे परिपूर्ण एक कलावाले चन्द्रमासे सुशोभित उज्ज्वल ललाट-पटलवाली, सम्पूर्ण विलासोंकी कलाओंके आश्रयभूत मन्दगति तथा क्रीडासे सम्पन्न राजहंसोंके समुदायसे सुशोभित होनेवाली और भौंरोंके सदृश काले तथा सघन केशपाशकी चोटीपर शोभायमान मौलसिरी पुष्पोंकी सुगन्धसे भ्रमरसमूहोंको आकृष्ट करनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ १४॥

आपके हाथमें सुशोभित मुरलीकी ध्वनि सुनकर बोलना बंद करके लाजसे भरी हुई कोकिलाके प्रति प्रिय भावना रखनेवाली, भौंरोंके समूहोंकी मनोहर गुंजारसे सुशोभित पर्वत-प्रदेशके निकुंजोंमें विहार करनेवाली और अपने भूत तथा भिल्लिनी आदि गणोंके नृत्यसे युक्त क्रीडाओंको देखनेमें सदा तल्लीन रहनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ १५॥

अपने कटिप्रदेशपर सुशोभित पीले रंगके रेशमी वस्त्रकी विचित्र कान्तिसे सूर्यकी प्रभाको तिरस्कृत कर देनेवाली, सुमेरु पर्वतके शिखरपर मदोन्मत्त गर्जना करनेवाले हाथियोंके गण्डस्थलको लजाने

प्रणतसुरासुरमौलिमणिस्फुरदंशुलसन्नखचन्द्ररुचे
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १६ ॥
विजितसहस्रकरैकसहस्रकरैकसहस्रकरैकनुते
कृतसुरतारकसङ्गरतारकसङ्गरतारकसूनुनुते ।
सुरथसमाधिसमानसमाधिसमाधिसमाधिसुजाप्यरते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १७ ॥
पदकमलं करुणानिलये वरिवस्यति योऽनुदिनं सुशिवे
अयि कमले कमलानिलये कमलानिलयः स कथं न भवेत् ।

नख:प्रभावाली और आपको प्रणाम करनेवाले देवताओं तथा दैत्योंके मस्तकपर स्थित मणियोंसे निकली हुई किरणोंसे प्रकाशित चरणनखोंमें चन्द्रमासदृश कान्ति धारण करनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ १६ ॥

हजारों हाथों नक्षत्रोंको जीतनेवाले, हजारों किरणोंवाले भगवान् सूर्यको एकमात्र नमस्करणीय, देवताओंके उद्धारहेतु युद्ध करनेवाले तारकासुरसे संग्राम करनेवाले तथा संसारसागरसे पार करनेवाले शिवजीके पुत्र कार्तिकेयसे प्रणाम की जानेवाली और राजा सुरथ तथा समाधि नामक वैश्यकी सविकल्प समाधियोंके समान समाधियोंमें सम्यक् जप करनेवालोंमें प्रेम रखनेवाली हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो ॥ १७ ॥

हे करुणानिधे कल्याणकारिणी शिवे! हे कमलनिवासिनी कमले! जो मनुष्य प्रतिदिन आपके चरणकमलकी उपासना करता है, उसे लक्ष्मीका आश्रय

तव पदमेव परं पदमस्त्विति शीलयतो मम किं न शिवे
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १८ ॥

कनकलसत्कलशीकजलैरनुषिञ्चति तेऽङ्गणरङ्गभुवं
भजति स किं न शचीकुचकुम्भतटीपरिरम्भसुखानुभवम्।
तव चरणं शरणं करवाणि सुवाणि पथं मम देहि शिवं
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ १९ ॥

तव विमलेन्दुकलं वदनेन्दुमलं कलयन्ननुकूलयते
किमु पुरुहूतपुरीन्दुमुखीसुमुखीभिरसौ विमुखीक्रियते।

क्या नहीं प्राप्त होगा। हे शिवे! आपका चरण ही परम पद (मोक्ष) है—ऐसी भावना रखनेवाले मुझ भक्तको क्या-क्या सुलभ नहीं हो जायगा अर्थात् सब कुछ प्राप्त हो जायगा। हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ १८ ॥

स्वर्णिम कलश समान जलधाराओंसे जो आपके प्राङ्गणकी रंगभूमिको प्रक्षालित कर उसे स्वच्छ बनाता है, वह इन्द्राणीके समान विशाल वक्षस्थलोंवाली सुन्दरियोंका सान्निध्य-सुख अवश्य ही प्राप्त करता है। हे परमेश्वरि! मैं आपके चरणोंको ही अपना शरणस्थल बनाऊँ, मुझे कल्याणकारक मार्ग प्रदान करो। हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती! आपकी जय हो, जय हो॥ १९ ॥

आपके चन्द्रमाके सदृश सुशोभित होनेवाले आपके मुखचन्द्रको निर्मल करके जो आपको प्रसन्न कर लेता है, क्या उसे भगवान् इन्द्रकी नगरीमें रहनेवाली चन्द्रमुखी सुन्दरियाँ ब्रह्मचर्य विचलित नहीं बना सकती हैं।

मम तु मतं शिवनामधने भवती कृपया किमु न क्रियते
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ २० ॥
अयि मयि दीनदयालुतया कृपयैव त्वया भवितव्यमुमे
अयि जगतो जननीति यथाऽसि मयाऽसि तथाऽनुमतासि रमे ।
यदुचितमत्र भवत्पुरगं कुरु शाम्भवि देवि दयां कुरु मे
जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ २१ ॥
स्तुतिमिमां स्तिमितः सुसमाधिना नियमतो यमतोऽनुदिनं पठेत् ।
परमया रमया स निषेव्यते परिजनोऽरिजनोऽपि च तं भजेत् ॥ २२ ॥

॥ इति श्रीभगवतीस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

भगवान् शिवके सम्मानको अपना अक्षय धन माननेवाली ! हे भगवति ! मेरा तो यह विश्वास है कि आपकी कृपासे क्या-क्या सिद्ध नहीं हो जाता ! हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती ! आपकी जय हो, जय हो ॥ २० ॥

हे उमे ! आप सदा दीन-दुःखियोंपर दयाका भाव रखती हैं, अतः आप मुझपर कृपालु बनी रहें। हे महालक्ष्मी ! जैसे आप सारे संसारकी माता हैं, वैसे ही मैं आपको अपनी भी माता समझता हूँ। हे शिवे ! यदि आपको उचित प्रतीत होता हो तो मुझे अपने लोकमें जानेकी योग्यता प्रदान करें। हे देवि ! मुझपर दया करें। हे भगवान् शिवकी प्रिय पत्नी महिषासुरमर्दिनी पार्वती ! आपकी जय हो, जय हो ॥ २१ ॥

जो मनुष्य शान्तभावसे पूर्णरूपसे मनको एकाग्र करके तथा इन्द्रियोंका निग्रह कर नियमपूर्वक प्रतिदिन इस स्तोत्रका पाठ करता है, भगवती महालक्ष्मी उसके यहाँ सदा वास करती हैं और उसके बन्धु-बान्धव तथा शत्रुगण भी सदा उसकी सेवामें तत्पर रहते हैं ॥ २२ ॥

॥ इस प्रकार भगवतीस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

६१—संकष्टनामाष्टकम्

नारद उवाच

जैगीषव्य मुनिश्रेष्ठ सर्वज्ञ सुखदायक।
आख्यातानि सुपुण्यानि श्रुतानि त्वत्प्रसादतः ॥ १ ॥
न तृप्तिमधिगच्छामि तव वागमृतेन च।
वदस्वैकं महाभाग संकटाख्यानमुत्तमम् ॥ २ ॥
इति तस्य वचः श्रुत्वा जैगीषव्योऽब्रवीत्ततः।
संकष्टनाशनं स्तोत्रं शृणु देवर्षिसत्तम ॥ ३ ॥
द्वापरे तु पुरा वृत्ते भ्रष्टराज्यो युधिष्ठिरः।
भ्रातृभिः सहितो राज्यनिर्वेदं परमं गतः ॥ ४ ॥
तदानीं तु ततः काशीं पुरीं यातो महामुनिः।
मार्कण्डेय इति ख्यातः सह शिष्यैर्महायशाः ॥ ५ ॥

नारदजी बोले—हे मुनिवर जैगीषव्य! हे सर्वज्ञ! हे सुखदायक! आपकी कृपासे मैंने परम कल्याणदायक अनेक आख्यान सुने। किंतु आपकी अमृतमयी वाणीसे मुझे तृप्ति नहीं हो रही है। अतः हे महाभाग! अब संकटनिवारणका [illegible] उत्तम आख्यान कहिये ॥ १-२ ॥

तब उनका यह वचन सुनकर जैगीषव्य बोले—हे देवर्षिश्रेष्ठ! अब आप संकटका नाश करनेवाला स्तोत्रको सुनें ॥ ३ ॥

पूर्वकालमें जब द्वापरयुग चल रहा था, उसमें धर्मराज युधिष्ठिर राज्यसे च्युत हो भाइयोंके [illegible] [illegible] महान् गहरे कष्टमें पड़ गये ॥ ४ ॥

उस समय वे वहाँसे काशीपुरी गये, जहाँ महायशस्वी तथा आशीर्वादक महर्षि मार्कण्डेयजी अपने शिष्योंके साथ विराजमान थे ॥ ५ ॥

तं दृष्ट्वा स समुत्थाय प्रणिपत्य सुपूजितः।
किमर्थं म्लानवदन एतत्त्वं मां निवेदय॥ ६ ॥

युधिष्ठिर उवाच

संकष्टं मे महत्प्राप्तमेतादृग्वदनं ततः।
एतन्निवारणोपायं किञ्चिद् ब्रूहि मुने मम॥ ७ ॥

मार्कण्डेय उवाच

आनन्दकानने देवी संकटा नाम विश्रुता।
वीरेश्वरोत्तरे भागे पूर्वं चन्द्रेश्वरस्य च॥ ८ ॥
शृणु नामाष्टकं तस्याः सर्वसिद्धिकरं नृणाम्।
संकटा प्रथमं नाम द्वितीयं विजया तथा॥ ९ ॥
तृतीयं कामदा प्रोक्तं चतुर्थं दुःखहारिणी।
शर्वाणी पञ्चमं नाम षष्ठं कात्यायनी तथा॥ १० ॥

उन मुनिको देखकर युधिष्ठिरने उठकर प्रणाम किया। तत्पश्चात् उनके द्वारा भलीभाँति पूजित मार्कण्डेयजीने उनसे पूछा—'आपके मुखपर उदासी क्यों है, आप मुझे यह बतलाइये' ॥ ६ ॥

युधिष्ठिर बोले—मुझे महान् कष्ट मिला है, इसी कारणसे मेरे मुखपर ऐसी उदासी है। हे मुने! आप मेरे इस कष्टके निवारणका कोई उपाय बतलावें ॥ ७ ॥

मार्कण्डेयजी बोले—आनन्दवन (काशी) में 'संकटा' नामकी विख्यात देवी रहती हैं, जो वीरेश्वरके उत्तरभागमें तथा चन्द्रेश्वरके पूर्वभागमें स्थित हैं ॥ ८ ॥

मनुष्योंको सभी सिद्धियाँ प्रदान करनेवाले उनके नामाष्टकको सुनिये। उनका पहला नाम संकटा, दूसरा विजया, तीसरा नाम कामदा, चौथा नाम दुःखहारिणी, पाँचवाँ शर्वाणी, छठा कात्यायनी

सप्तमं धूम्रवर्णा सर्वरोगहराऽष्टमम्।
नामाष्टकमिदं पुण्यं त्रिसंध्यं श्रद्धयाऽन्वितः॥ ११॥
यः पठेत्पाठयेद्वापि नरो मुच्येत संकटात्।
इत्युक्त्वा तु द्विजश्रेष्ठमृषिर्वाराणसीं ययौ॥ १२॥
इति तस्य वचः श्रुत्वा नारदो हर्षनिर्भरः।
ततः सम्पूजितां देवीं वीरेश्वरसमन्विताम्॥ १३॥
भुजैस्तु दशभिर्युक्तां लोचनत्रयभूषिताम्।
मालाकमण्डलुयुतां पद्मशङ्खगदायुताम्॥ १४॥
त्रिशूलडमरुधरां खड्गचर्मविभूषिताम्।
वरदाभयहस्तां तां प्रणम्य विधिनन्दनः॥ १५॥
वारत्रयं गृहीत्वा तु ततो विष्णुपुरं ययौ।
एतत्स्तोत्रस्य पठनं पुत्रपौत्रविवर्धनम्॥ १६॥

सातवीं धूम्रवर्णा और आठवीं नाम सर्वरोगहरा कहा गया है। जो मनुष्य श्रद्धासे युक्त होकर देवी संकटाके इस कल्याणकारी नामाष्टक स्तोत्रका तीनों सन्ध्याकालोंमें पाठ करता या कराता है, वह संकटसे मुक्त हो जाता है। द्विजवर नारदसे ऐसा कहकर ऋषि गंगातटस्थ वाराणसी चले गये॥ ९—१२॥

इतनी यह बात सुनकर नारदजी आनन्दमें परिपूर्ण हो गये। इसके बाद उन्होंने वीरेश्वरसहित दस भुजाओं तथा तीन नेत्रोंसे सुशोभित, माला तथा कमण्डलु धारण करनेवाली, पद्म शंख-गदासे समन्वित, त्रिशूल तथा डमरू धारण करनेवाली, खड्ग तथा ढालसे विभूषित, हाथोंमें वर तथा अभय मुद्रा धारण करनेवाली भगवती संकटाका पूजन किया। इस प्रकार सम्यक् रूपसे पूजित उन देवीको प्रणाम करके तथा तीन बार इनका नामोच्चारण करके ब्रह्मपुत्र नारद विष्णुलोकको चले गये। इस स्तोत्रका पाठ पुत्र पौत्रकी वृद्धि

संकष्टनाशनं चैव त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्।
गोपनीयं प्रयत्नेन महावन्ध्याप्रसूतिकृत्॥१७॥

॥इति श्रीपद्मपुराणे संकष्टनामाष्टकं सम्पूर्णम्॥

६२—तुलसीस्तुतिः

श्रीभगवानुवाच

वृन्दारूपाश्च वृक्षाश्च यदैकत्र भवन्ति च।
विदुर्बुधास्तेन वृन्दां मत्प्रियां तां भजाम्यहम्॥१॥
पुरा बभूव या देवी त्वादौ वृन्दावने वने।
तेन वृन्दावनी ख्याता सौभाग्यां तां भजाम्यहम्॥२॥
असंख्येषु च विश्वेषु पूजिता या निरन्तरम्।
तेन विश्वपूजिताख्यां जगत्पूज्यां भजाम्यहम्॥३॥

करनेवाला है। संकटका नाश करनेवाला यह स्तोत्र तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध है और यह महावन्ध्या स्त्रीको भी संतानकी प्राप्ति करानेवाला है। इस स्तोत्रको प्रयत्नपूर्वक गोपनीय रखना चाहिये॥१६—१७॥

॥इस प्रकार श्रीपद्मपुराणमें वर्णित संकष्टनामाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीभगवान् बोले—जब वृन्दा (तुलसी)-रूप वृक्ष तथा दूसरे वृक्ष एकत्र होते हैं, तब वृक्षसमूह अथवा वनको बुधजन वृन्दा कहते हैं। ऐसी वृन्दा नामसे प्रसिद्ध अपनी प्रिया तुलसीकी मैं उपासना करता हूँ॥१॥

जो देवी प्राचीनकालमें वृन्दावनमें प्रकट हुई थीं, अतएव जिन्हें वृन्दावनी कहते हैं, उन सौभाग्यवती देवीकी मैं उपासना करता हूँ॥२॥

जो असंख्य ब्रह्माण्डोंमें निरन्तर पूजा प्राप्त करती हैं, अतः जिनका नाम विश्वपूजिता पड़ा है, उन जगत्पूज्या देवीकी मैं उपासना करता हूँ॥३॥

असंख्यानि च विश्वानि पवित्राणि यया सदा।
तां विश्वपावनीं देवीं विरहेण स्मराम्यहम्॥ ४॥
देवा न तुष्टाः पुष्पाणां समूहेन यया विना।
तां पुष्पसारां शुद्धां च द्रष्टुमिच्छामि शोकतः॥ ५॥
विश्वे यत्प्राप्तिमात्रेण भक्तानन्दो भवेद् ध्रुवम्।
नन्दिनी तेन विख्याता सा प्रीता भवताद्धि मे॥ ६॥
यस्या देव्यास्तुला नास्ति विश्वेषु निखिलेषु च।
तुलसी तेन विख्याता तां यामि शरणं प्रियाम्॥ ७॥
कृष्णाजीवनरूपा या शश्वत्प्रियतमा सती।
तेन कृष्णजीवनीति मम रक्षतु जीवनम्॥ ८॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे भगवत्कृता तुलसीस्तुतिः सम्पूर्णा॥

जिन्होंने सदा असंख्य विश्वोंको पवित्र किया है, उन विश्वपावनी देवीका मैं विरहसे आतुर होकर स्मरण करता हूँ॥ ४॥

जिनके बिना अन्य पुष्पसमूहोंसे अर्पण करनेपर भी देवता प्रसन्न नहीं होते, ऐसी पुष्पसारा—पुष्पोंमें सारभूता, शुद्धस्वरूपिणी तुलसीदेवीका मैं शोकसे व्याकुल होकर दर्शन करना चाहता हूँ॥ ५॥

संसारमें जिनकी प्राप्तिमात्रसे भक्त परम आनन्दित हो जाता है, इसलिये नन्दिनी नामसे जिनकी प्रसिद्धि है, वे भगवती तुलसी अब मुझपर प्रसन्न हो जायँ॥ ६॥

जिन देवीकी अखिल विश्वमें कहीं तुलना नहीं है, अतएव जो 'तुलसी' कहलाती हैं, उन अपनी प्रियाकी मैं शरण ग्रहण करता हूँ॥ ७॥

वे साध्वी तुलसी वृन्दावनमें भगवान् श्रीकृष्णकी जीवनस्वरूपा हैं और उनकी सदा प्रियतमा होनेसे 'कृष्णजीवनी' नामसे विख्यात हैं। वे देवी तुलसी मेरे जीवनकी रक्षा करें॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणके प्रकृतिखण्डमें भगवान्‌द्वारा की गयी तुलसीस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

६३—तुलसीस्तोत्रम्

जगद्धात्रि नमस्तुभ्यं विष्णोश्च प्रियवल्लभे।
यतो ब्रह्मादयो देवाः सृष्टिस्थित्यन्तकारिणः॥ १॥
नमस्तुलसि कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे।
नमो मोक्षप्रदे देवि नमः सम्पत्प्रदायिके॥ २॥
तुलसी पातु मां नित्यं सर्वापद्भ्योऽपि सर्वदा।
कीर्तितापि स्मृता वापि पवित्रयति मानवम्॥ ३॥
नमामि शिरसा देवीं तुलसीं विलसत्तनुम्।
यां दृष्ट्वा पापिनो मर्त्या मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषात्॥ ४॥
तुलस्या रक्षितं सर्वं जगदेतच्चराचरम्।
या विनिहन्ति पापानि दृष्ट्वा वा पापिभिर्नरैः॥ ५॥

हे जगज्जननी! हे विष्णुकी प्रियवल्लभे! आपको नमस्कार है। आपकी ही शक्ति पाकर ब्रह्मा आदि देवता विश्वका सृजन, पालन तथा संहार करनेमें समर्थ होते हैं॥ १॥

हे कल्याणमयी तुलसि! आपको नमस्कार है। हे सौभाग्यशालिनी विष्णुप्रिये! आपको नमस्कार है। हे मोक्षदायिनी देवि! आपको नमस्कार है। हे सम्पत्ति देनेवाली देवि! आपको नमस्कार है॥ २॥

भगवती तुलसी समस्त आपदाओंसे नित्य मेरी रक्षा करें। इनका संकीर्तन अथवा स्मरण करनेपर ये देवी तुलसी मनुष्यको पवित्र कर देती हैं॥ ३॥

प्रकाशमान विग्रहवाली भगवती तुलसीको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ, जिनका दर्शन करके पापी मनुष्य सभी पापोंसे मुक्त हो जाते हैं॥ ४॥

तुलसीके द्वारा यह सम्पूर्ण चराचर जगत् रक्षित है। पापी मनुष्योंके द्वारा इनका दर्शनमात्र कर लेनेसे भगवती उनके पापोंका नाश कर देती हैं॥ ५॥

नमस्तुलस्यतितरां यस्यै बद्ध्वाञ्जलिं कलौ।
कलयन्ति सुखं सर्वं स्त्रियो वैश्यास्तथाऽपरे॥ ६ ॥
तुलस्या नापरं किञ्चिद् दैवतं जगतीतले।
यथा पवित्रितो लोको विष्णुसङ्गेन वैष्णवः॥ ७ ॥
तुलस्याः पल्लवं विष्णोः शिरस्यारोपितं कलौ।
आरोपयति सर्वाणि श्रेयांसि वरमस्तके॥ ८ ॥
तुलस्यां सकला देवा वसन्ति सततं यतः।
अतस्तामर्चयेल्लोके सर्वान् देवान् समर्चयन्॥ ९ ॥
नमस्तुलसि सर्वज्ञे पुरुषोत्तमवल्लभे।
पाहि मां सर्वपापेभ्यः सर्वसम्पत्प्रदायिके॥ १० ॥

हे तुलसि! आपको नमस्कार है, जिन्हें श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़कर नमस्कार करनेमात्रसे कलियुगमें सभी स्त्रियाँ, वैश्य तथा अन्य लोग समस्त सुख प्राप्त कर लेते हैं॥ ६॥

इस पृथ्वीतलपर तुलसीके अतिरिक्त अन्य कोई देवता नहीं है, जिनके द्वारा यह जगत् इसी भाँति पवित्र कर दिया गया है जैसे भगवान् विष्णुके प्रति अनुरागभावसे कोई वैष्णव पवित्र हो जाता है॥ ७॥

इस कलियुगमें भगवान् विष्णुके शिरपर अर्पित किया गया तुलसीका पल्लव इस संसारमें सभी प्रकारके कल्याण-मार्गमें प्रतिष्ठित कर देता है॥ ८॥

समस्त देवगण तुलसीमें निवास करते हैं, अतः लोकमें मनुष्यको सभी देवताओंकी पूजा करनेके साथ ही तुलसीकी भी आराधना करनी चाहिये॥ ९॥

हे सब कुछ जाननेवाली तुलसि! आपको नमस्कार है। हे विष्णुप्रिये! हे सर्वसम्पत्प्रदायिनि! सभी पापोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ १०॥

इति स्तोत्रं पुरा गीतं पुण्डरीकेण धीमता।
विष्णुमर्चयता नित्यं शोभनैस्तुलसीदलैः ॥ ११ ॥
तुलसी श्रीर्महालक्ष्मीर्विद्याविद्या यशस्विनी।
धर्म्या धर्मानना देवी देवीदेवमनःप्रिया ॥ १२ ॥
लक्ष्मीप्रियसखी देवी द्यौर्भूमिरचला चला।
षोडशैतानि नामानि तुलस्याः कीर्तयन्नरः ॥ १३ ॥
लभते सुतरां भक्तिमन्ते विष्णुपदं लभेत्।
तुलसी भूर्महालक्ष्मीः पद्मिनी श्रीर्हरिप्रिया ॥ १४ ॥
तुलसि श्रीसखि शुभे पापहारिणि पुण्यदे।
नमस्ते नारदनुते नारायणमनःप्रिये ॥ १५ ॥

॥ इति श्रीपुण्डरीककृतं तुलसीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

पूर्वकालमें श्रेष्ठ तुलसीदलोंसे भगवान् विष्णुकी नित्य अर्चना करते हुए बुद्धिमान् पुण्डरीक इस स्तोत्रका गान किया करते थे ॥ ११ ॥

तुलसी, श्री, महालक्ष्मी, विद्या, अविद्या, यशस्विनी, धर्म्या, धर्मानना, देवी, देवीदेवमनःप्रिया, लक्ष्मीप्रियसखी, देवी, द्यौ, भूमि, अचला और चला— भगवती तुलसीके इन सोलह नामोंका संकीर्तन करनेवाला मनुष्य निश्चल भक्ति प्राप्त करता है और अन्तमें विष्णुलोकको प्राप्त कर लेता है। तुलसी, भू, महालक्ष्मी, पद्मिनी, श्री तथा हरिप्रिया—इन नामोंसे आप प्रसिद्ध हैं। लक्ष्मीकी सखी, सौभाग्यशालिनी, पापोंका नाश करनेवाली, पुण्य देनेवाली, नारदजीके द्वारा नमस्कृत तथा नारायणके मनको प्रिय लगनेवाली हे तुलसि! आपको नमस्कार है ॥ १२—१५ ॥

॥ इस प्रकार श्रीपुण्डरीककृत तुलसीस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

६४—षष्ठीस्तोत्रम्

प्रियव्रत उवाच

नमो देव्यै महादेव्यै सिद्ध्यै शान्त्यै नमो नमः।
शुभायै देवसेनायै षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥ १॥
वरदायै पुत्रदायै धनदायै नमो नमः।
सुखदायै मोक्षदायै षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥ २॥
शक्तेः षष्ठांशरूपायै सिद्धायै च नमो नमः।
मायायै सिद्धयोगिन्यै षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥ ३॥
पारायै पारदायै च षष्ठीदेव्यै नमो नमः।
सारायै शारदायै च परायै सर्वकर्मणाम्॥ ४॥
बालाधिष्ठातृदेव्यै च षष्ठीदेव्यै नमो नमः।
कल्याणदायै कल्याण्यै फलदायै च कर्मणाम्॥ ५॥

राजा प्रियव्रत बोले—देवीको नमस्कार है। महादेवीको नमस्कार है। भगवती सिद्धि एवं शान्तिको नमस्कार है। शुभा, देवसेना एवं भगवती षष्ठीको बार-बार नमस्कार है। वरदा, पुत्रदा, धनदा, सुखदा एवं मोक्षदा भगवती षष्ठीको बार-बार नमस्कार है॥ १-२॥

मूलप्रकृतिके छठे अंशसे प्रकट होनेवाली भगवती सिद्धाको नमस्कार है। माया, सिद्धयोगिनी, उनका भुक्ति एवं मुक्तिदायिनी, सारा, शारदा और सभी कर्मोंके फल देनेवाली भगवती षष्ठीको बार-बार नमस्कार है॥ ३-४॥

बालकोंकी अधिष्ठात्री, कल्याण प्रदान करनेवाली, कल्याणस्वरूपिणी एवं कर्मोंके फल प्रदान करनेवाली देवी षष्ठीको बार-बार नमस्कार है॥ ५॥

प्रत्यक्षायै च भक्तानां षष्ठीदेव्यै नमो नमः।
पूज्यायै स्कन्दकान्तायै सर्वेषां सर्वकर्मसु॥ ६ ॥
देवरक्षणकारिण्यै षष्ठीदेव्यै नमो नमः।
शुद्धसत्त्वस्वरूपायै वन्दितायै नृणां सदा॥ ७ ॥
हिंसाक्रोधवर्जितायै षष्ठीदेव्यै नमो नमः।
धनं देहि प्रियां देहि पुत्रं देहि सुरेश्वरि॥ ८ ॥
धर्मं देहि यशो देहि षष्ठीदेव्यै नमो नमः।
भूमिं देहि प्रजां देहि देहि विद्यां सुपूजिते॥ ९ ॥
कल्याणं च जयं देहि षष्ठीदेव्यै नमो नमः।
इति देवीं च संस्तूय लेभे पुत्रं प्रियव्रतः।
यशस्विनं च राजेन्द्रः षष्ठीदेवीप्रसादतः॥ १० ॥

भक्तोंको प्रत्यक्ष दर्शन देनेवाली तथा सबके लिये सम्पूर्ण कार्योंमें पूजा प्राप्त करनेकी अधिकारिणी स्वामी कार्तिकेयकी प्राणप्रिया देवी षष्ठीको बार-बार नमस्कार है ॥ ६ ॥

मनुष्य जिनकी सदा वन्दना करते हैं तथा देवताओंकी रक्षामें जो तत्पर रहती हैं, उन शुद्धसत्त्वस्वरूपा देवी षष्ठीको बार-बार नमस्कार है। हिंसा और क्रोधसे रहित भगवती षष्ठीको बार-बार नमस्कार है। हे सुरेश्वरि! आप मुझे धन दें, प्रिय पत्नी दें और पुत्र देनेकी कृपा करें ॥ ७-८ ॥

मुझे धर्म दें, यश दें। हे भगवती षष्ठी! आपको बार-बार नमस्कार है। हे सुपूजिते! आप मुझे भूमि दें, प्रजा दें, विद्या दें तथा कल्याण एवं जय प्रदान करें। हे षष्ठीदेवि! आपको बार-बार नमस्कार है। इस प्रकार देवीकी स्तुति करनेके पश्चात् महाराज प्रियव्रतने षष्ठीदेवीके प्रभावसे यशस्वी पुत्र प्राप्त कर लिया ॥ ९-१० ॥

षष्ठीस्तोत्रमिदं ब्रह्मन् यः शृणोति च वत्सरम्।
अपुत्रो लभते पुत्रं वरं सुचिरजीविनम्॥ ११॥
वर्षमेकं च या भक्त्या संयतेदं शृणोति च।
सर्वपापाद्विनिर्मुक्ता महावन्ध्या प्रसूयते॥ १२॥
वीरपुत्रं च गुणिनं विद्यावन्तं यशस्विनम्।
सुचिरायुष्मन्तमेव षष्ठीमातृप्रसादतः॥ १३॥
काकवन्ध्या* च या नारी मृतापत्या च या भवेत्।
वर्षं श्रुत्वा लभेत्पुत्रं षष्ठीदेवीप्रसादतः॥ १४॥
रोगयुक्ते च बाले च पिता माता शृणोति च।
मासं च मुच्यते बालः षष्ठीदेवीप्रसादतः॥ १५॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे प्रियव्रतकृतं षष्ठीस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

ब्रह्मन्! जो पुरुष भगवती षष्ठीके इस स्तोत्रका एक वर्षतक श्रवण करता है, वह यदि पुत्रहीन हो तो दीर्घजीवी सुन्दर पुत्र प्राप्त कर लेता है॥ ११॥

जो स्त्री एक वर्षतक भक्तिपूर्वक संयतचित्त होकर देवीकी पूजा करके इनका यह स्तोत्र सुनती है, उसके सम्पूर्ण पाप विलीन हो जाते हैं। महान् वन्ध्या भी उनके प्रसादसे सन्तान प्रसव करनेकी योग्यता प्राप्त कर लेती है। वह माता षष्ठीदेवीकी कृपासे गुणी, विद्वान्, यशस्वी, दीर्घायु एवं श्रेष्ठ पुत्रकी जननी होती है॥ १२-१३॥

काकवन्ध्या अथवा मृतवत्सा नारी एक वर्षतक इसका श्रवण करनेके फलस्वरूप भगवती षष्ठीके प्रभावसे पुत्र प्राप्त कर लेती है। यदि बालकको रोग हो जाय तो उसके माता-पिता एक मासतक इस स्तोत्रका श्रवण करें तो षष्ठीदेवीकी कृपासे उस बालककी व्याधि शान्त हो जाती है॥ १४-१५॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणके प्रकृतिखण्डमें प्रियव्रतकृत षष्ठीदेवीस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

* काकवन्ध्या वह नारी है, जो एक ही सन्तान उत्पन्न करती है।

६५—सुरभिस्तोत्रम्

महेन्द्र उवाच

नमो देव्यै महादेव्यै सुरभ्यै च नमो नमः।
गवां बीजस्वरूपायै नमस्ते जगदम्बिके॥ १॥
नमो राधाप्रियायै च पद्मांशायै नमो नमः।
नमः कृष्णप्रियायै च गवां मात्रे नमो नमः॥ २॥
कल्पवृक्षस्वरूपायै सर्वेषां सततं परम्।
श्रीदायै धनदायै च बुद्धिदायै नमो नमः॥ ३॥
शुभदायै प्रसन्नायै गोप्रदायै नमो नमः।
यशोदायै सौख्यदायै धर्मज्ञायै नमो नमः॥ ४॥
स्तोत्रस्मरणमात्रेण तुष्टा हृष्टा जगत्प्रसूः।
आविर्बभूव तत्रैव ब्रह्मलोके सनातनी॥ ५॥

महेन्द्र बोले—देवी एवं महादेवी सुरभीको बार-बार नमस्कार है। जगदम्बिके! तुम गौओंकी बीजस्वरूपा हो, तुम्हें नमस्कार है। तुम श्रीराधाकी प्रिया हो, तुम्हें नमस्कार है। तुम लक्ष्मीकी अंशभूता हो, तुम्हें बार-बार नमस्कार है। श्रीकृष्णप्रियाको नमस्कार है। गौओंकी माताको बार-बार नमस्कार है॥ १-२॥

जो सबके लिये कल्पवृक्षस्वरूपा तथा श्री, धन और बुद्धि प्रदान करनेवाली हैं, उन भगवती सुरभीको बार-बार नमस्कार है। शुभदा, प्रसन्ना और गोप्रदायिनी सुरभिदेवीको बार-बार नमस्कार है। यश और सौख्य प्रदान करनेवाली धर्मज्ञा देवीको बार-बार नमस्कार है॥ ३-४॥

इस प्रकार स्तुति सुनते ही सनातनी जगज्जननी भगवती सुरभी संतुष्ट और प्रसन्न हो उस ब्रह्मलोकमें ही प्रकट हो गयीं।

महेन्द्राय वरं दत्त्वा वाञ्छितं सर्वदुर्लभम्।
जगाम सा च गोलोकं ययुर्देवादयो गृहम्॥ ६ ॥
बभूव विश्वं सहसा दुग्धपूर्णं च नारद।
दुग्धाद् घृतं ततो यज्ञस्ततः प्रीतिः सुरस्य च॥ ७ ॥
इदं स्तोत्रं महापुण्यं भक्तियुक्तश्च यः पठेत्।
स गोमान् धनवांश्चैव कीर्तिवान् पुण्यवान् भवेत्॥ ८ ॥
सुस्नातः सर्वतीर्थेषु सर्वयज्ञेषु दीक्षितः।
इह लोके सुखं भुक्त्वा यात्यन्ते कृष्णमन्दिरम्॥ ९ ॥
सुचिरं निवसेत्तत्र कुरुते कृष्णसेवनम्।
न पुनर्भवनं तस्य ब्रह्मपुत्र भवे भवेत्॥ १० ॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे महेन्द्रकृतं सुरभिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

देवराज इन्द्रको परम दुर्लभ मनोवाञ्छित वर देकर वे सुरभि गोलोकको चली गयीं, देवता भी अपने-अपने स्थानोंको चले गये॥ ५-६॥

नारद! फिर तो सारा विश्व सहसा दूधसे परिपूर्ण हो गया। दूधसे घृत बना और उससे यज्ञ सम्पन्न होने लगे तथा उनसे देवता संतुष्ट हुए॥ ७॥

जो मानव इस महान् पवित्र स्तोत्रका भक्तिपूर्वक पाठ करेगा, वह गोधनसे सम्पन्न, प्रचुर सम्पत्तिवाला, परम यशस्वी और पुत्रवान् हो जायगा॥ ८॥

उसे सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करने तथा अखिल यज्ञोंमें दीक्षित होनेका फल सुलभ होगा। ऐसा पुरुष इस लोकमें सुख भोगकर अन्तमें भगवान् श्रीकृष्णके धाममें चला जाता है॥ ९॥

चिरकालतक वहाँ रहकर भगवान्‌की सेवा करता रहता है। हे ब्रह्मपुत्र नारद! उसे पुनः इस संसारमें नहीं आना पड़ता॥ १०॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणके प्रकृतिखण्डमें महेन्द्रकृत सुरभिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

६६—पृथ्वीस्तोत्रम्

विष्णुरुवाच

यज्ञसूकरजाया त्वं जयं देहि जयावहे।
जयेऽजये जयाधारे जयशीले जयप्रदे॥ १॥
सर्वाधारे सर्वबीजे सर्वशक्तिसमन्विते।
सर्वकामप्रदे देवि सर्वेष्टं देहि मे भवे॥ २॥
सर्वशस्यालये सर्वशस्याढ्ये सर्वशस्यदे।
सर्वशस्यहरे काले सर्वशस्यात्मिके भवे॥ ३॥
मङ्गले मङ्गलाधारे माङ्गल्ये मङ्गलप्रदे।
मङ्गलार्थे मङ्गलेशे मङ्गलं देहि मे भवे॥ ४॥

भगवान् विष्णु बोले—विजयकी प्राप्ति करानेवाली वसुधे! मुझे विजय दो। तुम भगवान् यज्ञवराहकी पत्नी हो। जये! तुम्हारी कभी पराजय नहीं होती है। तुम विजयका आधार, विजयशील और विजयदायिनी हो॥ १॥

देवि! तुम्हीं सबकी आधारभूमि हो। सर्वबीजस्वरूपिणी तथा सम्पूर्ण शक्तियोंसे सम्पन्न हो। समस्त कामनाओंको देनेवाली देवि! तुम इस संसारमें मुझे सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तु प्रदान करो॥ २॥

तुम सब प्रकारके शस्योंका घर हो। सब तरहके शस्योंसे सम्पन्न हो। सभी शस्योंको देनेवाली हो तथा समयविशेषमें समस्त शस्योंका अपहरण भी कर लेती हो। इस संसारमें तुम सर्वशस्यस्वरूपिणी हो॥ ३॥

मङ्गलमयी देवि! तुम मङ्गलका आधार हो। मङ्गलके योग्य हो। मङ्गलदायिनी हो। मङ्गलमय पदार्थ तुम्हारे स्वरूप हैं। मङ्गलेश्वरि! तुम जगत्में मुझे मङ्गल प्रदान करो॥ ४॥

भूमे भूमिपसर्वस्वे भूमिपालपरायणे ।
भूमिपाहङ्काररूपे भूमिं देहि च भूमिदे ॥ ५ ॥
इदं स्तोत्रं महापुण्यं तां सम्पूज्य च यः पठेत् ।
कोटिकोटि जन्मजन्म स भवेद् भूमिपेश्वरः ॥ ६ ॥
भूमिदानकृतं पुण्यं लभते पठनाज्जनः ।
भूमिदानहरात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ ७ ॥
भूमौ वीर्यत्यागपापाद् भूमौ दीपादिस्थापनात् ।
पापेन मुच्यते प्राज्ञः स्तोत्रस्य पठनान्मुने ।
अश्वमेधशतं पुण्यं लभते नात्र संशयः ॥ ८ ॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे विष्णुकृतं पृथ्वीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

भूमे! तुम भूमिपालोंकी सर्वस्व हो, भूमिपालपरायणा हो तथा भूमिपालोंके अहंकारकी मूर्तिरूप हो। भूमिदायिनी देवि! मुझे भूमि दो ॥ ५ ॥

[नारद!] यह स्तोत्र परम पवित्र है। जो पुरुष पृथ्वीकी पूजा करके इसका पाठ करता है, उसे अनेक जन्मोंतक भूपाल—सम्राट् होनेका सौभाग्य प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

इसे पढ़नेसे मनुष्य पृथ्वीके दानसे उत्पन्न पुण्यका अधिकारी बन जाता है। पृथ्वी दानके अपहरणसे जो पाप होता है, इस स्तोत्रका पाठ करनेवाला मनुष्य उससे छुटकारा पा जाता है, इसमें संशय नहीं है ॥ ७ ॥

मुने! पृथ्वीपर वीर्य त्यागने तथा दीपक रखनेसे जो पाप होता है, उससे भी बुद्धिमान् पुरुष इस स्तोत्रका पाठ करनेसे मुक्त हो जाता है और सौ अश्वमेधयज्ञोंके करनेका पुण्यफल प्राप्त करता है, इसमें संशय नहीं है ॥ ८ ॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणके प्रकृतिखण्डमें विष्णुकृत पृथ्वीस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

६७—स्वधास्तोत्रम्

ब्रह्मोवाच

स्वधोच्चारणमात्रेण तीर्थस्नायी भवेन्नरः।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो वाजपेयफलं लभेत्॥ १॥
स्वधा स्वधा स्वधेत्येवं यदि वारत्रयं स्मरेत्।
श्राद्धस्य फलमाप्नोति कालस्य तर्पणस्य च॥ २॥
श्राद्धकाले स्वधास्तोत्रं यः शृणोति समाहितः।
लभेच्छ्राद्धशतानां च पुण्यमेव न संशयः॥ ३॥
स्वधा स्वधा स्वधेत्येवं त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः।
प्रियां विनीतां स लभेत्साध्वीं पुत्रं गुणान्वितम्॥ ४॥
पितॄणां प्राणतुल्या त्वं द्विजजीवनरूपिणी।
श्राद्धाधिष्ठातृदेवी च श्राद्धादीनां फलप्रदा॥ ५॥

ब्रह्माजी बोले—'स्वधा' शब्दके उच्चारणमात्रसे मानव तीर्थस्नायी हो जाता है। वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर वाजपेययज्ञके फलका अधिकारी हो जाता है॥ १॥

स्वधा, स्वधा, स्वधा—इस प्रकार यदि तीन बार स्मरण किया जाय तो श्राद्ध, काल और तर्पणके फल पुरुषको प्राप्त हो जाते हैं॥ २॥

श्राद्धके अवसरपर जो पुरुष सावधान होकर स्वधादेवीके स्तोत्रका श्रवण करता है, वह सौ श्राद्धोंका पुण्य पा लेता है—इसमें संशय नहीं है॥ ३॥

जो मानव स्वधा, स्वधा, स्वधा—इस पवित्र नामका त्रिकाल सन्ध्याके समय पाठ करता है, उसे विनीत, पतिव्रता एवं प्रिय पत्नी प्राप्त होती है तथा सद्गुणसम्पन्न पुत्रका लाभ होता है॥ ४॥

देवि! तुम पितरोंके लिये प्राणतुल्या और ब्राह्मणोंके लिये जीवनस्वरूपिणी हो। तुम्हें श्राद्धकी अधिष्ठात्री देवी कहा गया है। तुम्हारी ही कृपासे श्राद्ध और तर्पण आदिके फल मिलते हैं॥ ५॥

बहिर्गच्छ मन्मनसः पितृणां तुष्टिहेतवे।
सम्प्रीतये द्विजातीनां गृहिणां वृद्धिहेतवे॥ ६ ॥
नित्या त्वं नित्यस्वरूपासि गुणरूपासि सुव्रते।
आविर्भावस्तिरोभावः सृष्टौ च प्रलये तव॥ ७ ॥
ॐ स्वस्तिश्च नमः स्वाहा स्वधा त्वं दक्षिणा तथा।
निरूपिताश्चतुर्वेदे षट् प्रशस्ताश्च कर्मिणाम्॥ ८ ॥
पुरासीस्त्वं स्वधागोपी गोलोके राधिकासखी।
धृतोरसि स्वधात्मानं कृतं तेन स्वधा स्मृता॥ ९ ॥
इत्येवमुक्त्वा स ब्रह्मा ब्रह्मलोके च संसदि।
तस्थौ च सहसा सद्यः स्वधा साविर्बभूव ह॥ १० ॥

तुम पितरोंकी तुष्टि, द्विजातियोंकी प्रीति तथा गृहस्थोंकी अभिवृद्धिके लिये मुझ ब्रह्माके मनसे निकलकर बाहर जाओ ॥ ६ ॥

सुव्रते! तुम नित्य हो, तुम्हारा विग्रह नित्य और गुणमय है। तुम सृष्टिके समय प्रकट होती हो और प्रलयकालमें तुम्हारा तिरोभाव हो जाता है ॥ ७ ॥

तुम ॐ, नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा एवं दक्षिणा हो। चारों वेदोंद्वारा तुम्हारे इन छः स्वरूपोंका निरूपण किया गया है, कर्मकाण्डी लोगोंमें इन छहोंकी बड़ी मान्यता है ॥ ८ ॥

हे देवि! तुम पहले गोलोकमें 'स्वधा' नामकी गोपी थी और राधिकाकी सखी थी। भगवान् कृष्णने अपने वक्षःस्थलपर तुम्हें धारण किया। इसी कारण तुम 'स्वधा' नामसे जानी गयीं ॥ ९ ॥

इस प्रकार देवी स्वधाकी महिमा गाकर ब्रह्माजी अपनी सभामें विराजमान हो गये। इतनेमें सहसा भगवती स्वधा उनके सामने प्रकट हो गयीं ॥ १० ॥

तदा पितृभ्यः प्रददौ तामेव कमलाननाम्।
तां सम्प्राप्य ययुस्ते च पितरश्च प्रहर्षिताः ॥ ११ ॥
स्वधास्तोत्रमिदं पुण्यं यः शृणोति समाहितः।
स स्नातः सर्वतीर्थेषु वेदपाठफलं लभेत् ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे ब्रह्मकृतं स्वधास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

६८—दक्षिणास्तोत्रम्

यज्ञ उवाच

पुरा गोलोकगोपी त्वं गोपीनां प्रवरा परा।
राधासमा तत्सखी च श्रीकृष्णप्रेयसी प्रिये ॥ १ ॥
कार्तिकीपूर्णिमायां तु रासे राधामहोत्सवे।
आविर्भूता दक्षिणांशात्कृष्णस्य तेन दक्षिणा ॥ २ ॥

तब पितामहने उन कमलमुखी देवीको पितरोंके प्रति समर्पित कर दिया। उन देवीको प्राप्त करके पितर अत्यन्त प्रसन्न होकर अपने लोकको चले गये ॥ ११ ॥

यह भगवती स्वधाका पुनीत स्तोत्र है। जो पुरुष समाहित चित्तसे इस स्तोत्रका श्रवण करता है, उसने मानो सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान कर लिया और वह वेदपाठका फल प्राप्त कर लेता है ॥ १२ ॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणके प्रकृतिखण्डमें ब्रह्माकृत स्वधास्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

यज्ञपुरुषने कहा—महाभागे! तुम पूर्वकालमें गोलोककी एक गोपी थी। गोपियोंमें तुम्हारा प्रमुख स्थान था। राधाके समान ही तुम उनकी सखी थी। भगवान् श्रीकृष्ण तुमसे प्रेम करते थे ॥ १ ॥

कार्तिकी पूर्णिमाके दिन राधा-महोत्सवके अवसरपर तुम भगवान् श्रीकृष्णके दाहिने कंधेसे प्रकट हुई थी। अतएव तुम्हारा नाम दक्षिणा पड़ गया ॥ २ ॥

पुरा त्वं सुशीलाख्या शीलेन शोभनेन च।
कृष्णदक्षांशवासाच्च राधाशापाच्च दक्षिणा॥ ३॥
गोलोकात्त्वं परिध्वस्ता मम भाग्यादुपस्थिता।
कृपां कुरु त्वमेवाद्य स्वामिनं कुरु मां प्रिये॥ ४॥
कर्मिणां कर्मणां देवी त्वमेव फलदा सदा।
त्वया विना च सर्वेषां सर्वं कर्म च निष्फलम्॥ ५॥
फलशाखाविहीनश्च यथा वृक्षो महीतले।
त्वया विना तथा कर्म कर्मिणां च न शोभते॥ ६॥
ब्रह्मविष्णुमहेशाश्च दिक्पालादय एव च।
कर्मणश्च फलं दातुं न शक्ताश्च त्वया विना॥ ७॥

तुम इससे पहले गोलोकमें शीलवाली होनेके कारण सुशीला कहलाती थी। भगवान् श्रीकृष्णके दक्षिणांशमें निवास करनेके कारण देवी श्रीराधाके शापसे गोलोकसे च्युत होकर दक्षिणा नामसे सम्पन्न हो मुझे सौभाग्यवश प्राप्त हुई हो। प्रिये! आज तुम मुझे अपना स्वामी बनानेकी कृपा करो॥ ३-४॥

तुम्हीं यज्ञशीली पुरुषोंके कर्मका सदा फल प्रदान करनेवाली आराध्यारूपा देवी हो। तुम्हारे बिना सम्पूर्ण प्राणियोंके सभी कर्म निष्फल हो जाते हैं॥ ५॥

तुम्हारी अनुपस्थितिमें कर्मियोंका कर्म उसी प्रकार शोभा नहीं पाता, जिस प्रकार पृथ्वीतलपर फल और शाखाओंसे विहीन वृक्ष शोभा नहीं पाता॥ ६॥

ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा दिक्पालप्रभृति सभी देवता तुम्हारे न रहनेसे कर्मोंका फल देनेमें असमर्थ रहते हैं॥ ७॥

कर्मरूपी स्वयं ब्रह्मा फलरूपी महेश्वरः ।
यज्ञरूपी विष्णुरहं त्वमेषां साररूपिणी ॥ ८ ॥
फलदाता परं ब्रह्म निर्गुणः प्रकृतेः परः ।
स्वयं कृष्णश्च भगवान्न च शक्तस्त्वया विना ॥ ९ ॥
त्वमेव शक्तिः कान्ते मे शश्वज्जन्मनि जन्मनि ।
सर्वकर्मणि शक्तोऽहं त्वया सह वरानने ॥ १० ॥
इत्युक्त्वा तत्पुरस्तस्थौ यज्ञाधिष्ठातृदेवकः ।
तुष्टा बभूव सा देवी भेजे तं कमलाकला ॥ ११ ॥
इदं च दक्षिणास्तोत्रं यज्ञकाले च यः पठेत् ।
फलं च सर्वयज्ञानां लभते नात्र संशयः ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे यज्ञपुरुषकृतं दक्षिणास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

ब्रह्मा स्वयं कर्मरूप हैं। शंकरको फलरूप बतलाया गया है। मैं विष्णु स्वयं यज्ञरूपसे प्रकट हूँ। इन सबमें साररूपा तुम्हीं हो ॥ ८ ॥

साक्षात् परब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्ण, जो प्राकृत गुणोंसे रहित तथा प्रकृतिसे परे हैं, समस्त फलोंके दाता हैं, परंतु वे श्रीकृष्ण भी तुम्हारे बिना कुछ करनेमें समर्थ नहीं हैं ॥ ९ ॥

कान्ते! सदा जन्म-जन्ममें तुम्हीं मेरी शक्ति हो। वरानने! तुम्हारे साथ रहकर ही मैं समस्त कर्मोंमें समर्थ हूँ ॥ १० ॥

ऐसा कहकर यज्ञके अधिष्ठाता देवता दक्षिणाके सामने खड़े हो गये। तब कमलाकी कलास्वरूपा उस देवीने संतुष्ट होकर यज्ञपुरुषका वरण किया ॥ ११ ॥

यह भगवती दक्षिणाका स्तोत्र है। जो पुरुष यज्ञके अवसरपर इसका पाठ करता है, उसे सम्पूर्ण यज्ञोंके फल सुलभ हो जाते हैं, इसमें संशय नहीं ॥ १२ ॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणके प्रकृतिखण्डमें यज्ञपुरुषकृत दक्षिणास्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

६९—मनसास्तोत्रम्

नारायण उवाच

कन्या भगवती सा च कश्यपस्य च मानसी ।
तेनेयं मनसा देवी मनसा या च दीव्यति ॥ १ ॥
मनसा ध्यायते या वा परमात्मानमीश्वरम् ।
तेन सा मनसा देवी योगेन तेन दीव्यति ॥ २ ॥
आत्मारामा च सा देवी वैष्णवी सिद्धयोगिनी ।
त्रियुगं च तपस्तप्त्वा कृष्णस्य परमात्मनः ॥ ३ ॥
जरत्कारुशरीरं च दृष्ट्वा यां क्षीणमीश्वरः ।
गोपीपतिर्नाम चक्रे जरत्कारुरिति प्रभुः ॥ ४ ॥
वाञ्छितं च ददौ तस्यै कृपया च कृपानिधिः ।
पूजां च कारयामास चकार च पुनः स्वयम् ॥ ५ ॥

भगवान् नारायण [नारदजीसे] कहते हैं—वे भगवती कश्यपजीकी मानसी कन्या हैं तथा मनसे उद्दीप्त होती हैं, इसलिये मनसादेवीके नामसे विख्यात हैं ॥ १ ॥

अथवा जो मनसे परमात्मा ईश्वर श्रीकृष्णका ध्यान करती हैं और उस मानसयोगसे प्रकाशित होती हैं, इसलिये मनसा कहलाती हैं ॥ २ ॥

आत्मामें रमण करनेवाली इन सिद्धयोगिनी वैष्णवीदेवीने तीन युगोंतक परब्रह्म भगवान् श्रीकृष्णकी तपस्या की है ॥ ३ ॥

गोपीपति परम प्रभु उन परमेश्वरने इनके वस्त्र और शरीरको जीर्ण देखकर इनका जरत्कारु नाम रख दिया ॥ ४ ॥

साथ ही उन कृपानिधिने कृपापूर्वक इनकी सभी अभिलाषाएँ पूर्ण कर दीं, इनकी पूजाका प्रचार किया और स्वयं भी इनकी पूजा की ॥ ५ ॥

स्वर्गे च नागलोके च पृथिव्यां ब्रह्मलोकतः।
भृशं जगत्सु गौरी सा सुन्दरी च मनोहरा।
जगद्गौरीति विख्याता तेन सा पूजिता सती॥ ६ ॥
शिवशिष्या च सा देवी तेन शैवीति कीर्तिता।
विष्णुभक्तातीव शश्वद् वैष्णवी तेन नारद॥ ७ ॥
नागानां प्राणरक्षित्री यज्ञे जनमेजयस्य च।
नागेश्वरीति विख्याता सा नागभगिनी तथा॥ ८ ॥
विषं संहर्तुमीशा सा तेन विषहरीति सा।
सिद्धं योगं हरात्प्राप तेनापि सिद्धयोगिनी॥ ९ ॥
महाज्ञानं च गोप्यं च मृतसञ्जीवनीं पराम्।
महाज्ञानयुतां तां च प्रवदन्ति मनीषिणः॥ १० ॥

स्वर्गमें, ब्रह्मलोकमें, भूमण्डलमें और पातालमें—सर्वत्र इनकी पूजा प्रचलित हुई। सम्पूर्ण जगत्‌में ये अत्यधिक गौरवर्णा, सुन्दरी और मनोहारिणी हैं; अतएव ये साध्वी देवी जगद्गौरीके नामसे विख्यात होकर सम्मान प्राप्त करती हैं॥ ६॥

भगवान् शिवसे शिक्षा प्राप्त करनेके कारण ये देवी शैवी कहलाती हैं। हे नारद! ये भगवान् विष्णुकी अनन्य उपासिका हैं। अतएव लोग इन्हें वैष्णवी कहते हैं॥ ७॥

राजा जनमेजयके यज्ञमें इन्हींके सत्प्रयत्नसे नागोंके प्राणोंकी रक्षा हुई थी, अतः इनका नाम नागेश्वरी और नागभगिनी पड़ गया॥ ८॥

विषका संहार करनेमें परम समर्थ होनेसे इनका एक नाम विषहरी है। इन्हें भगवान् शंकरसे योगसिद्धि प्राप्त हुई थी। अतः ये सिद्धयोगिनी कहलाने लगीं॥ ९॥

इन्होंने शंकरजीसे महान् गोपनीय ज्ञान एवं मृतसंजीवनी नामक उत्तम विद्या प्राप्त की है, इस कारण विद्वान् पुरुष इन्हें महाज्ञानयुक्ता कहते हैं॥ १०॥

आस्तीकस्य मुनीन्द्रस्य माता सा च तपस्विनः।
आस्तीकमाता विख्याता जगत्सु सुप्रतिष्ठिता॥ ११ ॥
प्रिया मुनेर्जरत्कारोर्मुनीन्द्रस्य महात्मनः।
योगिनो विश्वपूज्यस्य जरत्कारोः प्रिया ततः॥ १२ ॥

ॐ नमो मनसायै।

जरत्कारुर्जगद्गौरी मनसा सिद्धयोगिनी।
वैष्णवी नागभगिनी शैवी नागेश्वरी तथा॥ १३ ॥
जरत्कारुप्रियाऽऽस्तीकमाता विषहरीति च।
महाज्ञानयुता चैव सा देवी विश्वपूजिता॥ १४ ॥
द्वादशैतानि नामानि पूजाकाले च यः पठेत्।
तस्य नागभयं नास्ति तस्य वंशोद्भवस्य च॥ १५ ॥

ये देवी तपस्विनी मुनिवर आस्तीककी माता हैं। अतः ये देवी जगत्में सुप्रतिष्ठित होकर आस्तीकमाता नामसे विख्यात हुई हैं॥ ११ ॥

जगत्पूज्य योगी महात्मा मुनीन्द्र जरत्कारुकी प्रिय पत्नी होनेके कारण ये जरत्कारुप्रिया नामसे विख्यात हुईं॥ १२ ॥

ॐ मनसादेवीको नमस्कार है। जरत्कारु, जगद्गौरी, मनसा, सिद्धयोगिनी, वैष्णवी, नागभगिनी, शैवी, नागेश्वरी, जरत्कारुप्रिया, आस्तीकमाता, विषहरी और महाज्ञानयुता—इन बारह नामोंसे विश्वमें इनकी पूजा होती है॥ १३-१४ ॥

जो पुरुष पूजाके समय इन बारह नामोंका पाठ करता है, उसे तथा उसके वंशजोंको भी सर्पका भय नहीं हो सकता॥ १५ ॥

नागभीते च शयने नागग्रस्ते च मन्दिरे।
नागयुक्ते महादुर्गे नागवेष्टितविग्रहे॥ १६॥
इदं स्तोत्रं पठित्वा तु मुच्यते नात्र संशयः।
नित्यं पठेद्यस्तं दृष्ट्वा नागवर्गः पलायते॥ १७॥
दशलक्षजपेनैव स्तोत्रसिद्धिर्भवेन्नृणाम्।
स्तोत्रं सिद्धं भवेद्यस्य स विषं भोक्तुमीश्वरः॥ १८॥
नागौघं भूषणं कृत्वा स भवेन्नागवाहनः।
नागासनो नागतल्पो महासिद्धो भवेन्नरः॥ १९॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे नागवाहकृतं मनसास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

जिस शयनागारमें नागोंका भय हो, जिस भवनमें बहुतेरे नाग भरे हों, नागोंसे युक्त होनेके कारण जो महान् दारुण स्थान बन गया हो तथा जो नागोंसे वेष्टित हो, वहाँ भी मनुष्य इस स्तोत्रका पाठ करके सर्पोंके भयसे मुक्त हो जाता है—इसमें कोई संशय नहीं है। जो नित्य इसका पाठ करता है, उसे देखकर नाग भाग जाते हैं॥ १६-१७॥

दस लाख पाठ करनेसे यह स्तोत्र मनुष्योंके लिये सिद्ध हो जाता है। जिसे यह स्तोत्र सिद्ध हो गया, वह विषका पान करने तथा नागोंको भूषण बनाकर नागपर सवारी करनेमें भी समर्थ हो सकता है। वह नागासन, नागतल्प तथा महान् सिद्ध हो जाता है॥ १८-१९॥

इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणके प्रकृतिखण्डमें नागवाहकृत मनसास्तोत्र सम्पूर्ण हुआ।

७०—श्रीदुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ईश्वर उवाच

शतनाम प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने।
यस्य प्रसादमात्रेण दुर्गा प्रीता भवेत् सती॥ १ ॥
ॐ सती साध्वी भवप्रीता भवानी भवमोचनी।
आर्या दुर्गा जया चाद्या त्रिनेत्रा शूलधारिणी॥ २ ॥
पिनाकधारिणी चित्रा चण्डघण्टा महातपाः।
मनो बुद्धिरहङ्कारा चित्तरूपा चिता चितिः॥ ३ ॥
सर्वमन्त्रमयी सत्ता सत्यानन्दस्वरूपिणी।
अनन्ता भाविनी भाव्या भव्याभव्या सदागतिः॥ ४ ॥
शाम्भवी देवमाता च चिन्ता रत्नप्रिया सदा।
सर्वविद्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी॥ ५ ॥
अपर्णानेकवर्णा च पाटला पाटलावती।
पट्टाम्बरपरीधाना कलमञ्जीररञ्जिनी॥ ६ ॥
अमेयविक्रमा क्रूरा सुन्दरी सुरसुन्दरी।
वनदुर्गा च मातङ्गी मतङ्गमुनिपूजिता॥ ७ ॥
ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री कौमारी वैष्णवी तथा।
चामुण्डा चैव वाराही लक्ष्मीश्च पुरुषाकृतिः॥ ८ ॥
विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना क्रिया नित्या च बुद्धिदा।
बहुला बहुलप्रेमा सर्ववाहनवाहना॥ ९ ॥
निशुम्भशुम्भहननी महिषासुरमर्दिनी।
मधुकैटभहन्त्री च चण्डमुण्डविनाशिनी॥ १० ॥
सर्वासुरविनाशा च सर्वदानवघातिनी।
सर्वशास्त्रमयी सत्या सर्वास्त्रधारिणी तथा॥ ११ ॥

अनेकशस्त्रहस्ता च अनेकास्त्रस्य धारिणी।
कुमारी चैककन्या च कैशोरी युवती यतिः ॥ १२ ॥
अप्रौढा चैव प्रौढा च वृद्धमाता बलप्रदा।
महोदरी मुक्तकेशी घोररूपा महाबला ॥ १३ ॥
अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी।
नारायणी भद्रकाली विष्णुमाया जलोदरी ॥ १४ ॥
शिवदूती कराली च अनन्ता परमेश्वरी।
कात्यायनी च सावित्री प्रत्यक्षा ब्रह्मवादिनी ॥ १५ ॥
य इदं प्रपठेन्नित्यं दुर्गानामशताष्टकम्।
नासाध्यं विद्यते देवि त्रिषु लोकेषु पार्वति ॥ १६ ॥
धनं धान्यं सुतं जायां हयं हस्तिनमेव च।
चतुर्वर्गं तथा चान्ते लभेन्मुक्तिं च शाश्वतीम् ॥ १७ ॥
कुमारीं पूजयित्वा तु ध्यात्वा देवीं सुरेश्वरीम्।
पूजयेत् परया भक्त्या पठेन्नामशताष्टकम् ॥ १८ ॥
तस्य सिद्धिर्भवेद् देवि सर्वैः सुरवरैरपि।
राजानो दासतां यान्ति राज्यश्रियमवाप्नुयात् ॥ १९ ॥
गोरोचनालक्तककुङ्कुमेन
सिन्दूरकर्पूरमधुत्रयेण ।
विलिख्य यन्त्रं विधिना विधिज्ञो
भवेत् सदा धारयते पुरारिः ॥ २० ॥
भौमावास्यानिशामग्रे चन्द्रे शतभिषां गते।
विलिख्य प्रपठेत् स्तोत्रं स भवेत् सम्पदां पदम् ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीविश्वसारतन्त्रे श्रीदुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

महादेवीके विभिन्न स्वरूपोंका ध्यान

(१) भगवती दुर्गा

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥

मैं तीन नेत्रोंवाली दुर्गादेवीका ध्यान करता हूँ, उनके श्रीअंगोंकी प्रभा बिजलीके समान है। वे सिंहके कंधेपर बैठी हुई भयंकर प्रतीत होती हैं। हाथोंमें तलवार और ढाल लिये अनेक कन्याएँ उनकी सेवामें खड़ी हैं। वे अपने हाथोंमें चक्र, गदा, तलवार, ढाल, बाण, धनुष, पाश और तर्जनी मुद्रा धारण किये हुए हैं। उनका स्वरूप अग्निमय है तथा वे माथेपर चन्द्रमाका मुकुट धारण करती हैं।

(२) भगवती ललिता

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम्।
पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम्॥

सिन्दूरके समान अरुण विग्रहवाली, तीन नेत्रोंसे सम्पन्न, माणिक्यजटित प्रकाशमान मुकुट तथा चन्द्रमासे सुशोभित मस्तकवाली, मुसकानयुक्त मुखमण्डल एवं स्थूल वक्षःस्थलवाली, अपने दोनों हाथोंमेंसे एक हाथमें मधुसे परिपूर्ण रत्ननिर्मित मधुकलश तथा दूसरे हाथमें लाल कमल धारण करनेवाली और रत्नमय घटपर अपना लाल चरण रखकर सुशोभित होनेवाली शान्तस्वभाव भगवती परमाम्बिकाका ध्यान करना चाहिये।

(३) भगवती गायत्री

रक्तश्वेतहिरण्यनीलधवलैर्युक्तां त्रिनेत्रोज्ज्वलां
रक्तां रक्तनवस्रजं मणिगणैर्युक्तां कुमारीमिमाम्।
गायत्रीं कमलासनां करतलव्यानद्धकुण्डाम्बुजां
पद्माक्षीं च वरस्रजं च दधतीं हंसाधिरूढां भजे॥

जो रक्त, श्वेत, पीत, नील और धवल वर्णोंके मुखोंसे सम्पन्न हैं, तीन नेत्रोंसे जिनका विग्रह देदीप्यमान हो रहा है, जिन्होंने अपने रक्तवर्ण शरीरको नूतन लाल कमलोंकी मालासे सजा रखा है, जो अनेक मणियोंसे अलंकृत हैं, जो कमलके आसनपर विराजमान हैं, जिनके दो हाथोंमें कमल और कुण्डिका एवं दो हाथोंमें वर तथा अक्षमाला सुशोभित हैं, उन हंसकी सवारी करनेवाली, कुमारी अवस्थासे सम्पन्न भगवती गायत्रीकी मैं उपासना करता हूँ।

(४) भगवती अन्नपूर्णा

सिन्दूराभां त्रिनेत्रामृतशशिकलां खेचरीं रक्तवस्त्रां
पीनोत्तुङ्गस्तनाढ्यामभिनवविलसद्यौवनारम्भरम्याम्।
नानालङ्कारयुक्तां सरसिजनयनामिन्दुसंक्रान्तमूर्तिं
देवीं पाशाङ्कुशाढ्यामभयवरकरामन्नपूर्णां नमामि॥

जिनके अंगकी कान्ति सिन्दूर-सरीखी है, जो तीन नेत्रोंसे युक्त, अमृतमय शशिकलासे युक्त, आकाशमें गमन करनेवाली, लाल वस्त्रसे सुशोभित, स्थूल एवं ऊँचे स्तनोंसे युक्त, नवीन उल्लसित यौवनारम्भसे रमणीय, विविध अलंकारोंसे युक्त हैं, जिनके नेत्र कमलसदृश हैं, जिनकी मूर्ति चन्द्रमाको संक्रान्त करनेवाली है, जिनके हाथ पाश, अंकुश, अभय और वरद मुद्रासे सुशोभित हैं, उन अन्नपूर्णादेवीको मैं नमस्कार करता हूँ।

(५) भगवती सर्वमंगला

हेमाभां करुणाभिपूर्णनयनां माणिक्यभूषोज्ज्वलां
द्वात्रिंशद्दलषोडशाष्टदलयुक्पद्मस्थितां सुस्मिताम्।
भक्तानां धनदां वरं च दधतीं वामेन हस्तेन तद्-
दक्षेणाभयमातुलुङ्गसुफलं श्रीमङ्गलां भावये॥

जिनकी कान्ति स्वर्णसदृश है, जिनके नेत्र करुणासे परिपूर्ण रहते हैं, जो माणिक्यके आभूषणोंसे विभूषित, बत्तीस दल, षोडशदल, अष्टदल कमलपर स्थित, सुन्दर मुसकानसे सुशोभित, भक्तोंको धन देनेवाली, बायें हाथमें वरद मुद्रा तथा दायें हाथमें अभयमुद्रा एवं बिजौरा नीबूका सुन्दर फल धारण करनेवाली हैं, उन श्रीमंगला देवीकी मैं भावना करता हूँ।

(६) भगवती विजया

शङ्खं चक्रं च पाशं सृणिमपि सुमहाखेटखड्गौ सुचापं
बाणं कह्लारपुष्पं तदनु करगतं मातुलुङ्गं दधानाम्।
उद्यद्बालार्कवर्णां त्रिभुवनविजयां पञ्चवक्त्रां त्रिनेत्रां
देवीं पीताम्बराढ्यां कुचभरनमितां संततं भावयामि॥

जो अपने हाथोंमें क्रमशः शंख, चक्र, पाश, अंकुश, विशाल ढाल, खड्ग, सुन्दर धनुष, बाण, कमलपुष्प और बिजौरा नीबू धारण करती हैं, जिनका रंग उदयकालीन बालसूर्यके सदृश है, जो त्रिभुवनपर विजय पानेवाली हैं, जिनके पाँच मुख और तीन नेत्र हैं, जो पीताम्बरसे विभूषित और स्तनोंके भारसे झुकी रहती हैं, उन विजयादेवीकी मैं निरन्तर भावना करता हूँ।

(७) भगवती प्रत्यंगिरा

श्यामाभां च त्रिनेत्रां तां सिंहवक्त्रां चतुर्भुजाम्।
ऊर्ध्वकेशीं च सिंहस्थां चन्द्राङ्कितशिरोरुहाम्॥
कपालशूलडमरुनागपाशधरां शुभाम्।
प्रत्यङ्गिरां भजे नित्यं सर्वशत्रुविनाशिनीम्॥

जिनकी अङ्गकान्ति श्याम है, जिनके तीन नेत्र और चार भुजाएँ हैं, जिनका मुख सिंहके मुखसदृश है, जिनके केश ऊपर उठे रहते हैं, जो सिंहपर आरूढ़ होती हैं, जिनके बालोंमें चन्द्रमा शोभित होते हैं; जो कपाल, शूल, डमरू और नागपाश धारण करती हैं तथा समस्त शत्रुओंका विनाश करनेवाली हैं, उन मंगलस्वरूपिणी प्रत्यंगिराका मैं नित्य भजन करता हूँ।

(८) भगवती सौभाग्यलक्ष्मी

भूयाद्भूयो द्विपद्माभयवरदकरा तप्तकार्तस्वराभा
शुभ्राभ्राभेभयुग्मद्वयकरधृतकुम्भाद्भिरासिच्यमाना।
रक्तौघाबद्धमौलिर्विमलतरदुकूलार्तवालेपनाढ्या
पद्माक्षी पद्मनाभोरसि कृतवसतिः पद्मगा श्रीः श्रियै नः॥

जिन्होंने अपने दोनों हाथोंमें दो पद्म तथा शेष दोमें वर और अभय मुद्राएँ धारण कर रखी हैं, तप्त कांचनके समान जिनकी मनोहर कान्ति है, शुभ्र मेघोंकी भाँति आकाशमें युग्म दो हाथियोंकी सूँड़ोंमें धारण किये हुए कलशोंके जलसे जिनका अभिषेक हो रहा है, रक्तवर्णके नाना रत्नादि रत्नोंका मुकुट जिनके सिरपर सुशोभित है, जिनके वस्त्र अत्यन्त स्वच्छ हैं, ऋतुके अनुकूल चन्दनादि आलेपनके द्वारा जिनके अंग लिप्त हैं, पद्मके समान जिनके नेत्र हैं, पद्मनाभ अर्थात् श्रीहरि विष्णुभगवान्‌के वक्षःस्थलमें जिनका निवास है, वे कमलके आसनपर विराजमान श्रीदेवी हमारे लिये धन-सम्पत्तिका विधान करें।

(१) भगवती अपराजिता

नीलोत्पलनिभां देवीं निद्रामुद्रितलोचनाम्।
नीलकुञ्चितकेशाग्र्यां निम्ननाभीवलित्रयाम्॥
वराभयकराम्भोजां प्रणतार्तिविनाशिनीम्।
पीताम्बरवरोपेतां भूषणस्त्रग्विभूषिताम्॥
वरशक्त्याकृतिं सौम्यां परसैन्यप्रभञ्जिनीम्।
शङ्खचक्रगदाभीतिरम्यहस्तां त्रिलोचनाम्॥
सर्वकामप्रदां देवीं ध्यायेत् तामपराजिताम्॥

जिनकी कान्ति नीलकमल-सरीखी है, जिनके नेत्र निद्रासे मुँदे रहते हैं, जिनके केशोंके अग्रभाग नीले और घुँघराले हैं, जिनकी नाभि गहरी और त्रिवलीसे युक्त है, जो करकमलोंमें वरद और अभयमुद्रा धारण करती हैं, शरणागतोंकी पीड़ाको नष्ट करनेवाली हैं, उत्तम पीताम्बर धारण करती हैं, आभूषण और मालासे विभूषित रहती हैं, जिनकी आकृति श्रेष्ठ शक्तिसे युक्त और सौम्य है, जो शत्रुओंकी सेनाका संहार करनेवाली हैं, जिनके हाथ शंख, चक्र, गदा और अभयमुद्रासे सुशोभित रहते हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जो समस्त कामनाओंको देनेवाली हैं, उन अपराजितादेवीका ध्यान करना चाहिये।

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते॥

जयन्ती, मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा, धात्री, स्वाहा और स्वधा—इन नामोंसे प्रसिद्ध जगदम्बिके! आपको नमस्कार है

आरती

१—श्रीदुर्गाजी

जगजननी जय! जय!! (मा! जगजननी जय! जय!!)
भयहारिणि, भवतारिणि, भवभामिनि जय! जय ॥ टेक ॥
तू ही सत-चित-सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा ।
सत्य सनातन सुन्दर पर-शिव सुर-भूपा ॥ जग० ॥
आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी ।
अमल अनन्त अगोचर अज आनँदराशी ॥ जग० ॥
अविकारी, अघहारी, अकल, कलाधारी ।
कर्ता विधि, भर्ता हरि, हर सँहारकारी ॥ जग० ॥
तू विधिवधू, रमा, तू उमा, महामाया ।
मूल प्रकृति विद्या तू, तू जननी, जाया ॥ जग० ॥
राम, कृष्ण तू, सीता, व्रजरानी राधा ।
तू वांछाकल्पद्रुम, हारिणि सब बाधा ॥ जग० ॥
दश विद्या, नव दुर्गा, नानाशस्त्रकरा ।
अष्टमातृका, योगिनि, नव नव रूप धरा ॥ जग० ॥
तू परधामनिवासिनि, महाविलासिनि तू ।
तू ही श्मशानविहारिणि, ताण्डवलासिनि तू ॥ जग० ॥
सुर-मुनि-मोहिनि सौम्या तू शोभाधारा ।
विवसन विकट-सरूपा, प्रलयमयी धारा ॥ जग० ॥
तू ही स्नेह-सुधामयि, तू अति गरलमना ।
रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थि तना ॥ जग० ॥

मूलाधारनिवासिनि, इह-पर-सिद्धिप्रदे।
कालातीता काली, कमला तू वरदे॥ जग०॥
शक्ति शक्तिधर तू ही नित्य अभेदमयी।
भेदप्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी॥ जग०॥
हम अति दीन दुखी मा! विपत-जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे॥ जग०॥
निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै।
करुणा कर करुणामयि! चरण-शरण दीजै॥ जग०॥

२—श्रीदेवीजी

आरति कीजै शैल-सुताकी॥ आरति०॥
जगदंबाकी आरति कीजै।
स्नेह-सुधा, सुख सुन्दर लीजै॥
जिनके नाम लेत दृग भीजै।
ऐसी वह माता वसुधाकी॥ आरति०॥
पाप-विनाशिनि कलि-मल-हारिणि।
दयामयी, भवसागरतारिणि॥
शस्त्र-धारिणि, शैल-विहारिणि।
बुद्धिराशि गणपति माताकी॥ आरति०॥
सिंहवाहिनी मातु भवानी।
गौरव-गान करैं जगप्रानी॥
शिवके हृदयासनकी रानी।
करैं आरती मिल-जुल ताकी॥ आरति०॥

३—श्रीअम्बाजी

जय अम्बे गौरी मैया जय श्यामा गौरी ।
तुमको निशिदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिव री ॥ जय० ॥
माँग सिंदूर विराजत टीको मृगमदको ।
उज्ज्वलसे दोउ नैना, चंद्रवदन नीको ॥ जय० ॥
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै ।
रक्त-पुष्प गल माला, कण्ठनपर साजै ॥ जय० ॥
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी ।
सुर-नर-मुनि-जन सेवत, तिनके दुखहारी ॥ जय० ॥
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती ।
कोटिक चंद्र दिवाकर सम राजत ज्योती ॥ जय० ॥
शुम्भ निशुम्भ बिदारे, महिषासुर-घाती ।
धूम्रविलोचन नैना निशिदिन मदमाती ॥ जय० ॥
चण्ड मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे ।
मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे ॥ जय० ॥
ब्रह्माणी, रुद्राणी तुम कमलारानी ।
आगम-निगम-बखानी, तुम शिव पटरानी ॥ जय० ॥
चौंसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरूँ ।
बाजत ताल मृदंगा औ बाजत डमरू ॥ जय० ॥
तुम ही जगकी माता, तुम ही हो भरता ।
भक्तनकी दुख हरता सुख सम्पति करता ॥ जय० ॥
भुजा चार अति शोभित, वर-मुद्रा धारी ।
मनवांछित फल पावत, सेवत नर-नारी ॥ जय० ॥
कञ्चन थाल विराजत अगर कपूर बाती ।
(श्री) मालकेतुमें राजत कोटिरतन ज्योती ॥ जय० ॥
(श्री) अम्बेजीकी आरति जो कोइ नर गावै ।
कहत शिवानँद स्वामी, सुख सम्पति पावै ॥ जय० ॥

४—श्रीज्वाला-कालीजी

'मंगल' की सेवा, सुन मेरी देवा! हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े।
पान-सुपारी, ध्वजा-नारियल ले ज्वाला तेरी भेंट धरे॥
सुन जगदम्बे न कर बिलंबे संतनके भंडार भरे।
संतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ टेक॥
'बुद्ध' विधाता तू जगमाता मेरा कारज सिद्ध करे।
चरण-कमलका लिया आसरा शरण तुम्हारी आन परे॥
जब-जब भीर पड़े भक्तनपर तब-तब आय सहाय करे।
संतन प्रतिपाली० ॥
'गुरु' के वार सकल जग मोह्यो तरुणीरूप अनूप धरे।
माता होकर पुत्र खिलावे, कहीं भार्या भोग करे॥
'शुक्र' सुखदाई सदा सहाई संत खड़े जयकार करे।
संतन प्रतिपाली० ॥
ब्रह्मा विष्णु महेस फल लिये भेंट देन तव द्वार खड़े।
अटल सिंहासन बैठी माता सिर सोनेका छत्र फिरे॥
वार 'शनिश्चर' कुंकुम बरणी, जब लुंकड़पर हुकुम करे।
संतन प्रतिपाली० ॥
खड्ग खप्पर त्रिशूल हाथ लिये रक्तबीजकूं भस्म करे।
शुंभ निशुंभ क्षणहिमें मारे महिषासुरको पकड़ दले॥
'आदित' वारी आदि भवानी जन अपनेका कष्ट हरे।
संतन प्रतिपाली० ॥
कुपित होय कर दानव मारे चण्ड मुण्ड सब चूर करे।
जब तुम देखो दयारूप हो, पलमें संकट दूर टरे॥
'सोम' स्वभाव धर्यो मेरी माता जनकी अर्ज कबूल करे।
संतन प्रतिपाली० ॥

मान ताको महिमा बरनी सब गुण कौन बखान करै।
सिंहपीठपर चढ़ी भवानी अटल भवनमें राज्य करै॥
दर्शन पावें मंगल गावें सिद्ध साधक तेरी भेंट धरें।
संतन प्रतिपालें०॥
ब्रह्मा वेद पढ़ें तेरे द्वारे शिवशंकर हरि ध्यान करें।
इन्द्र कृष्ण तेरी करें आरती चमर कुबेर डुलाय करें॥
जय जननी जय मातु भवानी अचल भवनमें राज्य करै।
संतन प्रतिपालो सदा खुशाली जय काली कल्याण करै॥

५—श्रीगीताजी

जय भगवद्गीते, माँ जय भगवद्गीते।
हरि-हिय-कमल-विहारिणि सुन्दर सुपुनीते॥ टेक॥
कर्म-सुमर्म-प्रकाशिनि कामासक्तिहरा।
तत्त्व-ज्ञान-विकाशिनि विद्या ब्रह्म-परा॥ जय०॥
निश्चल-भक्ति-विधायिनि निर्मल मलहारी।
शरण-रहस्य-प्रदायिनि सब विधि सुखकारी॥ जय०॥
राग-द्वेष-विदारिणि कारिणि मोद सदा।
भव-भय-हारिणि तारिणि परमानन्दप्रदा॥ जय०॥
आसुर-भाव-विनाशिनि नाशिनि तम-रजनी।
दैवी-सद्गुण-दायिनि हरि-रसिका सजनी॥ जय०॥
समता त्याग-सिखावनि, हरिमुखकी बानी।
सकल शास्त्रकी स्वामिनि, श्रुतियोंकी रानी॥ जय०॥
दया-सुधा-बरसावनि मातु! कृपा कीजै।
हरि-पद-प्रेम दान कर अपनो कर लीजै॥ जय०॥

६—श्रीसरस्वतीजी

जय सरस्वती माता, मैया जय सरस्वती माता।
सद्गुण, वैभवशालिनि, त्रिभुवन विख्याता॥ जय०॥
चन्द्रवदनि, पद्मासिनि द्युति मंगलकारी।
सोहे हंस-सवारी, अतुल तेजधारी॥ जय०॥
बायें कर में वीणा, दूजे कर माला।
शीश मुकुट-मणि सोहे, गले मोतियन माला॥ जय०॥
देव शरण में आये, उनका उद्धार किया।
पैठि मंथरा दासी, असुर-संहार किया॥ जय०॥
वेद-ज्ञान-प्रदायिनि, बुद्धि-प्रकाश करो।
मोहाज्ञान तिमिर का सत्वर नाश करो॥ जय०॥
धूप-दीप-फल-मेवा—पूजा स्वीकार करो।
ज्ञान-चक्षु दे माता, सब गुण-ज्ञान भरो॥ जय०॥
माँ सरस्वती की आरती, जो कोई जन गावे।
हितकारी, सुखकारी ज्ञान-भक्ति पावे॥ जय०॥

७—श्रीलक्ष्मीजी

ॐ जय लक्ष्मी माता, (मैया) जय लक्ष्मी माता।
तुमको निसिदिन सेवत हर-विष्णू-धाता॥ ॐ॥
उमा, रमा, ब्रह्माणी, तुम ही जग-माता।
सूर्य-चन्द्रमा ध्यावत, नारद ऋषि गाता॥ ॐ॥
दुर्गारूप निरंजनि, सुख-सम्पत्ति दाता।
जो कोइ तुमको ध्यावत, ऋधि-सिधि-धन पाता॥ ॐ॥
तुम पाताल-निवासिनि, तुम ही शुभदाता।
कर्म-प्रभाव-प्रकाशिनि, भवनिधिकी त्राता॥ ॐ॥

जिस घर तुम रहती, तहँ सब सद्गुण आता।
सब सम्भव हो जाता, मन नहिं घबराता॥ ॐ॥
तुम बिन यज्ञ न होते, वस्त्र न हो पाता।
खान-पानका वैभव सब तुमसे आता॥ ॐ॥
शुभ-गुण-मन्दिर सुन्दर, क्षीरोदधि-जाता।
रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहिं पाता॥ ॐ॥
महालक्ष्मी (जी) की आरति, जो कोई नर गाता।
उर आनन्द समाता, पाप उतर जाता॥ ॐ॥

८—श्रीजानकीजी

आरति श्रीजनक-दुलारीकी।
सीताजी रघुवर-प्यारीकी॥ टेक॥
जगत-जननि जगकी विस्तारिणि,
नित्य सत्य साकेत-विहारिणि,
परम दयामयि दीनोद्धारिणि,
मैया भक्तन-हितकारीकी॥ सीताजी०॥
सती शिरोमणि पति-हित-कारिणि,
पति-सेवा हित वन-वन चारिणि,
पति-हित पति-वियोग-स्वीकारिणि,
त्याग-धर्म-मूरति-धारीकी॥ सीताजी०॥
विमल-कीर्ति सब लोकन छाई,
नाम लेत पावन मति आई,
सुमिरत कटत कष्ट दुखदाई,
शरणागत-जन-भय-हारीकी॥ सीताजी०॥